दिसंबर - 2013
वर्ष - 12 अंक - 1

सुगन्ध

राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड
विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र
की गृह-पत्रिका

संपादकीय

प्रश्न तो उठता है...

बात की शुरुआत सरदार भगत सिंह के बचपन से करना चाहता हूँ। एक बार बचपन में सरदार भगतसिंह अपने परिवार के लोगों के साथ अपने खेत पर गए हुए थे। परिवार के सभी सदस्य अपने-अपने काम में लगे हुए थे। भगतसिंह भी अपने आप में मस्त थे। भगतसिंह अपने खेत में तिनकों या फिर सूखी लकड़ियों को जगह-जगह रोप रहे थे। इस बाल क्रीड़ा को देखकर उनके चाचा ने बड़े ही प्यार से उनसे पूछा, 'क्या कर रहे हो, बेटे!' भगतसिंह ने बड़े ही गंभीर अंदाज में जवाब दिया, 'बंदूकें बो रहा हूँ।'

सरदार भगतसिंह के चाचा को यह जवाब एक बचपना सा लगा होगा। लेकिन इसके पीछे नन्हें भगतसिंह का मानसिक बल छुपा हुआ था। उस समय शायद ही किसी ने इस बात का विश्लेषण किया हो, लेकिन यह उत्तर उनके चाचा के मस्तिष्क में थोड़ी देर के लिए जरूर चौंध गया होगा, तभी तो अपने भतीजे के बचपन की बात को उन्होंने लोगों से बताया होगा। सरदार भगतसिंह जब किशोर हुए तो उनके जज्बे से दुनिया वाकिफ हो गई। उनका आंदोलन अंग्रेजों के लिए खौफ बन गया और उस अमर शहीद की भावनाओं से जो चिनगारी निकली, उससे अंग्रेजी हुकूमत खाक हो गई।

भगतसिंह ने जो आंदोलन चलाया था, उसमें वे अकेले नहीं थे, लेकिन बचपन में बंदूकें बोने और किशोरावस्था में आंदोलन चलाने के प्रति जो जज्बा था, वह उनका खुद का था। उस जज्बे ने सरदार भगतसिंह को देशप्रेमी बनाया। उनका देशप्रेम ठीक उसी तरह निश्छल और नि:स्वार्थ था, जैसा कि प्रेम के बारे में कहा जाता है कि 'प्रेम हाथ पर रखे पारे की तरह होता है, जब तक हाथ खुला है, तब तक वह टिकता है। ज्यों ही उसे मुट्ठी में कैद करने की कोशिश करते हैं, वह बाहर निकल जाता है।' प्रेम कोई भी हो, सत्य पर ही टिकता है। सत्यता ही प्रेम को दीर्घायु व वास्तविक बनाता है।

राजभाषा के प्रचार-प्रसार के अभियान से जुड़ने के बाद मुझे लगा है कि हमारे प्रयास में और अधिक जज्बे और उत्साह की आवश्यकता है। साथ ही इसमें राष्ट्रप्रेम की छौंक भी बहुत जरूरी है। यह अभियान कुछ लोगों का नहीं, बल्कि सभी लोगों का है। यह अभियान नीति निर्धारकों से लेकर आम आदमी का भी है। हम जाने-अनजाने ऐसे समाज का निर्माण कर रहे हैं, जो हमें सामाजिक वास्तविकताओं से दूर रख रहा है। उदाहरण के लिए एक डॉक्टर को ही ले लीजिए, वह मरीज से बात तो हिंदी या स्थानीय भाषा में करता है, लेकिन दवाइयाँ अंग्रेजी में लिखता है। इसी तरह दवा निर्माता अपनी दवाओं का प्रचार तो हिंदी या स्थानीय भाषा में करता है, लेकिन दवाई संबंधी सारी जानकारी अंग्रेजी में लिखता है। यह समाज के एक बड़े तबके के साथ ऐसा धोखा है, जो सत्ता का संभ्रांत चादर ओढ़े हुए है। ऐसे उदाहरणों से प्रश्न तो उठता है कि क्यों हमें अपने ही देश में संवैधानिक दर्जा प्राप्त भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए मुहिम चलाना पड़ता है? आजादी के छ: दशक बाद भी क्यों हमें राजभाषा के अस्तित्व की चिंता सताती है? इस तरह के सारे सवालों के जवाब हम सभी भारतीयों के समक्ष उठना लाजिमी है।

सरकारी नीतियाँ भी इसमें सुधार के उपाय नहीं करतीं, इसीलिए हमारी राजभाषा के प्रति एक असमंजस की स्थिति है। इस असमंजस की स्थिति से उबरना ही हमारी सबसे बड़ी चुनौती है। जिस दिन हमारा देश इस चुनौती से उबर जाएगा, उस दिन हमारी राजभाषा अपनी गरिमा व स्थान दोनों को हासिल कर लेगी। बस जरूरत है, अपने अंदर सरदार भगत सिंह जैसा जज्बा पैदा करने की और अपनी राजभाषा से प्रेम करने की। जिस जज्बे की ओर मेरा इशारा है, उसे तैयार करने के लिए प्रथमत: भारतीयों की भारतीयता को जगाना होगा। इसके लिए लेखकों, कवियों व हिंदी प्रेमियों को अपने भाव व प्रेम में निरंतर इजाफा करते रहना होगा।

नववर्ष मंगलमय हो!

राष्ट्रीय भावना का निर्माण करना एक महान देशसेवा है। इसी भावना से प्रभावित होकर हम पिछले ग्यारह वर्षों से 'सुगंध' के माध्यम से लोगों के मन में सरदार भगतसिंह की बंदूकों की तरह ही भारतीयता को बो रहे हैं। मुझे यह मालूम नहीं है कि हिंदी कब देश में वास्तविक राजभाषा का दर्जा प्राप्त करेगी, लेकिन इतना विश्वास जरूर है कि आपका साथ मुझे अवश्य मिलेगा और आप 'सुगंध' के मुहिम से अपने आप को अवश्य जोड़ेंगे। साथ ही यह भी बताना चाहता हूँ कि बिना आपके सहयोग और समर्थन के 'सुगंध' का यह प्रयास सार्थक नहीं होगा।

नया वर्ष आने वाला है। मैं, स्वयं और अपने सुगंध परिवार तथा संगठन की ओर से सुगंध के सभी लेखकों, लेखिकाओं एवं पाठकों को नववर्ष की शुभकामनाएँ देता हूँ तथा आने वाले वर्ष में सर्वमंगल की कामना करता हूँ।

संपादक

विषय सूची

'सुगन्ध'

वी एस पी की त्रैमासिक गृह-पत्रिका

वर्ष-12 अंक-1 दिसंबर, 2013

संपादक

वै बालाजी

उप-संपादक

वी सुगुणा

गोपाल

संपादकीय कार्यालय

विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र

कमरा सं.245, पहला तल

मुख्य प्रशासनिक भवन

विशाखपट्टणम-530 031

दूरभाष: 0891-2518471

मोबाइल: 9989888457 & 9949844146

ई-मेल: vspsugandh@rediffmail.com

vspsugandh@gmail.com

'सुगन्ध' में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं और उनके प्रति 'विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र प्रबंधन' जिम्मेदार नहीं है।

सृजनात्मक स्तंभ

कहानी

अनचाही बेटी	श्रीमती सुधा गोयल	9
रिश्ता जो जिया नहीं गया	श्रीमती मीनाक्षी जिजीविषा	16
पुण्यात्मा	श्री रमेश शर्मा	39
वक्त की सौदेबाजी (लघुकथा)	श्री कृष्ण शर्मा	21

बाल-सुगन्ध

भारतीय अर्थव्यवस्था	मास्टर साकेत रॉय	35
हमारी अर्थव्यवस्था और चुनौतियाँ	सुश्री सी एच भारती	36
भारतीय अर्थव्यवस्था: सामाजिक असमानता	सुश्री नमिता भारती	37

कविता

कविताएँ	डॉ जय शंकर शुक्ल	22-23

लेख

शल्य चिकित्सा: भारतीय परिप्रेक्ष्य में	डॉ संजय व खापर्डे	05
यीशु के अंतिम दिन	श्री सुधीर निगम	12
राष्ट्रीय चेतना में साहित्य की भूमिका	डॉ दादूराम शर्मा	19
अकुलाहट को स्वर देता जनकवि 'मुक्तिबोध'	श्री सुरेंद्र अग्निहोत्री	27
काश! कोई मुझे भी एक बार बुद्धू कह देता	श्री सीताराम गुप्ता	32
एक मौन सामाजिक क्रांति	श्री सुभाष सेतिया	42

अध्यात्म

संस्कार		38

मानक स्तंभ

संगीत सरिता		26
वी एस पी के बढ़ते कदम - केंद्रीय अनुरक्षण विभाग		33
आओ भाषा सीखें		44
कार्य-कलाप		24-25

विविध

मछुआरिन	श्री प्रेम शंकर भगत	30

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 114वीं बैठक

राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड-विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 114वीं बैठक 31 दिसंबर, 2013 को संपन्न हुई। बैठक की कार्यवाही शुरु करने से पहले समिति के सभी सदस्यों ने अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री ए पी चौधरी को उनके सेवाकाल के दौरान संगठन में राजभाषा के बेहतर कार्यान्वयन हेतु उनके योगदान के लिए धन्यवाद ज्ञापित किया और सेवानिवृत्ति पश्चात उनके मंगलमय जीवन की कामना की। श्री चौधरी ने समिति से संगठन में राजभाषा की मुहिम को और आगे बढ़ाते हुए देश के समक्ष एक आदर्श प्रस्तुत करने की अपील की।

तत्पश्चात जुलाई-सितंबर, 2013 तिमाही के दौरान संगठन के विविध विभागों द्वारा पत्राचार में हिंदी के प्रयोग एवं राजभाषा के प्रयोग की समीक्षा की गयी और सुधार हेतु आवश्यक उपाय सुझाये गये। साथ ही यह निर्णय लिया गया है कि आर आई एन एल की प्रौद्योगिकी सुविधाओं से संबंधित विशेषांक के प्रकाशन हेतु कार्यदल गठित किया जाए तथा संगठन में विस्तारण के चलते अपनाई जा रही विविध प्रौद्योगिकी सुविधाओं से संबंधित जानकारी प्राप्त की जाए, ताकि विशेषांक के प्रकाशन कार्य में तेजी आए। बैठक में निदेशक (प्रचालन) श्री उमेशचंद्र, निदेशक (कार्मिक) श्री वै आर रेड्डी, निदेशक (परियोजना) श्री पी सी महापात्रा एवं कार्यपालक निदेशक (संकर्म) एवं अन्य वरिष्ठ अधिकारी उपस्थित थे।

आपकी पाती हमारी थाती

राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड की त्रैमासिक पत्रिका 'उक्कुवाणी' और हरित प्रौद्योगिकी पर केंद्रित विशेषांक 'सुगंध' प्राप्त हुए। विशाखपट्टणम राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड में जो उत्पादन हो रहा है, उसमें लौह अयस्क के साथ ही राष्ट्रीय निर्माणगत लोहे की जरूरी आपूर्ति होती है। आपका उत्पादन विश्व के अनेक देशों के विकास में उपयोगी व सराहनीय है। प्रकृति के साथ जबरदस्ती और अन्याय करने पर जो हानि और लाभ है, उसका प्रत्यक्ष उदाहरण उत्तराखंड में हृदय विदारक अकाल्पनिक विनाश के रूप में चतुर्दिश दिखाई पड़ रहा है। मुझे खुशी है कि विशाखपट्टणम के **25** किलोमीटर क्षेत्र में फैले हुए विशाल संयंत्र में लोगों की हरीतिमा का जिस तरह से विकास किया जा रहा है, उस मॉडल को पूरे देश में लागू करने की जरूरत है। 'सुगंध' का प्रत्येक अंक पठनीय और संग्रहणीय होता है और विशेषांक तो ज्ञानवर्धक क्षेत्र में अनुपमेय है। हरित प्रौद्योगिकी पर केंद्रित अंक भी उसी परंपरा के विकास की कड़ी है। सफल, सुगढ़, सोचपूर्ण, सरस संपादन के लिए बधाई।

- डॉ रत्नाकर पांडेय, दिल्ली

'सुगंध' पाकर हर्ष हुआ। सुधीर भाई का लेख बड़ा विचारोत्तेजक है। उन्होंने 'कंफ्यूशियस और भारतीय दर्शन' के कई महत्वपूर्ण प्रसंगों का उद्घाटन किया है। उनका मानना उचित है कि कंफ्यूशियस प्रवृत्तिमार्गी थे। पारिवारिक थे। उनकी तीन संतानें थीं। वहीं बुद्ध थे निवृत्तिमार्गी। कंफ्यूशियस काल-प्रवाह में मंत्री बने और अनेक आधुनिक, वैज्ञानिक उपलब्धियों से समाज की प्रगति की। गौतम ने राज्य त्यागकर संन्यास लिया। दिनकर मानते हैं कि न प्रवृत्ति की अधिकता काम्य है, क्योंकि यह पशुता का जनक है और न निवृत्ति का आधिक्य काम्य है, क्योंकि यह पलायन का मार्ग है। प्रवृत्ति की गाढ़ी स्याही में जब तक निवृत्ति का पानी मिलाया नहीं जाएगा, शांति और अध्यात्म की कविता नहीं लिखी जा सकती है। डॉ कमलेश भाई ने अपनी गजलों से समकालीन सच की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत की है। मनुष्य की संवेदना मर जाए तो उसको जगाने के सारे प्रयास व्यर्थ हैं।

'उनपर क्यों विश्वास करेगा कोई।
हर मौके पर बात बदलनेवाले हैं।।'
'वह कतई परदु:ख कातर नहीं है।
मोम न समझो हमको हम तो पत्थर हैं।।'

- पृष्ठ सं.**23**

सबको साधुवाद,

- प्रोफेसर मृत्यंजय उपाध्याय, धनबाद

'सुगंध' पत्रिका का कलेवर आकर्षक व सामग्री पठनीय है। एक साथ कहानी, कविता, लघुकथा, लेख आदि साथ ही अन्य ज्ञानवर्धक जानकारी से भरी सामग्री, कुल मिलाकर पत्रिका अपने आप में आकर्षक है। 'बिहारी दादा' (श्याम नारायण श्रीवास्तव) ग्रामीण क्षेत्र के एक ऐसे जीवंत पात्र है, जो अपने जीवट स्वभाव व कर्तव्यपरायणता के लिए आप भी अनुकरणीय है, जिनका जीवन कर्म के प्रति आस्था से शुरु होता है और कर्म करते ही अंत को प्राप्त होता है। 'आस-औलाद' कहानी ज्यानी चाचा के अंदर छिपे सच को अंतत: बाहर निकालने में सफल है। झूठ और स्वार्थ में गलत बयानी औलाद की कसम के साथ फुस्स हो जाती है। लघुकथाएँ भी मार्मिक प्रभाव डालने में सफल हैं। पत्रिका हिंदी पाठकों के लिए जरूरी है। इसे निकलते रहना चाहिए।

- डॉ सोमनाथ लाल, सुलतानपुर

आप द्वारा प्रेषित 'सुगंध' का अंक हस्तगत हुआ। आभार स्मरण का। अंक की महमहाती साहित्यिक संपन्नता पाठक को भरपूर तृप्ति देती है। सभी कहानियाँ रोचक तथा लघुकथा प्रभावी हैं। जयराम जय की कविताएँ आकर्षक हैं। लेख सभी पठनीय और उपयोगी हैं। परंतु मानवीय मूल्यों के पक्षधर निराला विशेष अच्छा लगा। संगीत सरिता, आओ भाषा सीखें तथा जरा गौर करें इत्यादि तो सुगंध की संपादकीय विशिष्टता की पहचान हैं। एक सार्थक अंक की सुंदर प्रस्तुति हेतु पत्रिका परिवार को हार्दिक बधाई। शुभकामनाओं सहित,

- श्री राजेंद्र तिवारी, कानपुर

राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड द्वारा प्रकाशित पत्रिका सुगंध प्राप्त हुआ। पत्रिका में ज्ञानवर्धक एवं रुचिकर आलेख पढ़कर खुशी हुई। श्री जयराम जय की कविताएँ दौड़-भाग की जिंदगी एवं हर पल टेंशन को रेखांकित करती हैं। विकास के नाम पर पर्यावरण से कैसे दूर होते जा रहे हैं - इस सदी में। 'सह यात्री' कहानी मन के संशय को पल-पल पल्लवित करती है। कहानी अच्छी लगी। गंगाधर आशीष की 'गर्लफ्रेंड उसकी वधू बनी', बनी या नहीं, वही जाने। अच्छा हास्य व्यंग्य है। बधाई। पत्रिका का आवरण पृष्ठ एवं प्रकाशन अति विशिष्ट है। आपके समस्त सहयोग मित्रों को अनेकानेक बधाइयाँ। आपके हिंदी विकास के प्रयास को नमन करता हूँ। धन्यवाद,

- श्री सुरजीत नवदीप, धमतरी

आपकी त्रैमासिक समाचार-पत्रिका 'उक्कुवाणी' इस्पात संयंत्र की व्यावसायिक राजभाषायी एवं सामाजिक गतिविधियों एवं समाचारों की चित्रमय तथा वृत्तात्मक सजीव झलकियाँ प्रस्तुत कर रही हैं। सफल उक्कुवाणी के प्रकाशन के लिए बधाई स्वीकारें। 'सुगंध' पत्रिका में समाहित साहित्य, साहित्य के शिखर को स्पर्श कर रहा है। जहाँ इसमें बेबसी, सहयात्री, श्यामा जैसी कहानियाँ हैं, वहीं लघु उत्पादन एवं हरित क्रांति में सुंदर तारतम्य प्रस्तुत किया है। निश्चित रूप से इतनी सुंदर गृह-पत्रिका के प्रकाशन के लिए संपादक मंडल बधाई का पात्र है।

- श्री विकास श्रीवास्तव, कानपुर

'सुगंध' का अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका का आवरण पृष्ठ मनमोहक विशेषांक के अनुरूप है। पत्रिका के लिए रचनाओं का चयन बहुत ही सूझ-बूझ के साथ किया गया। इसमें प्रकाशित सभी रचनाएँ एवं लेख एक से बढ़कर एक रोचक, पठनीय एवं प्रेरणादायक हैं। समाचार-पत्रिका 'उक्कुवाणी' में प्रकाशित सचित्र समाचार से आर आई एन एल में हो रही हिंदी की गतिविधियों के बारे में प्राप्त जानकारी से प्रसन्नता हो रही है। दक्षिण क्षेत्र से ऐसी स्तरीय पत्रिका का प्रकाशन आर आई एन एल के लिए निस्संदेह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। पत्रिका की दिनंदिन विकास एवं उज्ज्वल भविष्य के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ। पत्रिका के अगले अंक की प्रतीक्षा में...

- श्री टी भास्कर राजु, हावड़ा

'सुगंध' का 'हरित प्रौद्योगिकी' को समर्पित अंक प्राप्त हुआ। बहुत-बहुत धन्यवाद। प्रस्तुत अंक में मुझे 'कंफ्यूशियस और भारतीय दर्शन', 'कबीर की सामाजिक क्रांति' तथा बाल रचनाएँ विशेष रूप से पसंद आईं। संपादकीय सामयिक है और सोचने पर मजबूर करता है।

- श्री कृष्ण शर्मा, जम्मू

'सुगंध' पत्रिका का मुखपृष्ठ अत्यंत आकर्षक एवं संग्रहणीय है। आज के परिवेश में 'हरित प्रौद्योगिकी' का महत्व अप्रतिम है। 'उक्कुवाणी' से आपके कार्यालय में हो रही विभागीय गतिविधियों एवं कार्यकलापों के बारे में गहन जानकारी प्राप्त हुई। आपके इन कार्यकलापों से अत्यंत प्रेरणा मिली। पत्रिका के संपादन में सहयोगी सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों, विशेष रूप से राजभाषा कार्यान्वयन समिति एवं हिंदी अनुभाग का परिश्रम स्पष्ट रूप से झलकता है। आशा है कि उनकी सृजनात्मक एवं सहयोगपरक प्रतिभा का यह प्रयास आगे भी जारी रहेगा। निश्चित ही आपके अनुभवजन्य एवं विद्वत्तापूर्ण संपादन में 'उक्कुवाणी' राजभाषा हिंदी के प्रगामी प्रयोग के क्षेत्र में कई आयामों को पार करेगी। शुभकामनाओं सहित

- श्री राजनारायण अवस्थी, हैदराबाद

लेख

शल्य चिकित्सा: भारतीय परिप्रेक्ष्य में

- डॉ संजय व खापर्डे -

वैदिक व बौद्ध ग्रंथों से सिद्ध होता है कि भारत का प्राचीन चिकित्सा शास्त्र बहुत ही उन्नत और व्यापक था। वैदिक ग्रंथों में देवताओं के चिकित्सक भगवान धन्वंतरि के साथ-साथ कई ऋषियों के चिकित्सक होने का उल्लेख मिलता है। लेकिन चिकित्सा शास्त्र के क्षेत्र में धन्वंतरि द्वारा किए गए कार्यों का स्पष्ट वर्णन न मिलने के कारण उनको वैद्य के रूप में प्रमाणित करना मुश्किल हो जाता है। हालांकि कई जगह काशीनरेश को ही धन्वंतरि के रूप में जाना जाता है और यह भी कहा जाता है कि महर्षि सुश्रुत ने धन्वंतरि से शिक्षा ग्रहण की थी।[4]

अत्रेय और अग्नीवेश जैसे प्राचीन भारतीय विद्वानों ने लगभग ई सा पूर्व 800 साल पहले आयुर्वेद के सिद्धांतों की नींव डाली थी। उन्हीं के सिद्धांतों को चरक ने एकत्र करके एक पुस्तिका का लेखन किया, जिसे 'चरक संहिता' के नाम से जाना जाता है। चरक संहिता में रोगों की उत्पत्ति, उनसे बचने के उपाय और उन रोगों से ग्रस्त होने पर उनसे मुक्ति पाने के उपायों का वर्ण न किया गया है।[1]

ऐसी मान्यता है कि भारत में चिकित्सा शास्त्र की उत्पत्ति आयुर्वेद की रचना से पहले ही हो चुकी थी, लेकिन आयुर्वेद की रचना से चिकित्सा शास्त्र को एक स्थापित आकार मिला। चरक ने चिकित्सा शास्त्र को व्यापक और उन्नत बनाने के उद्देश्य से अपने संकलन 'चरक संहिता' को सूत्रस्थानम, निदानस्थानम, विमानस्थानम, शरीरस्थानम, इंद्रियस्थानम, चिकित्सास्थानम, कल्पस्थानम और सिद्धिस्थानम नामक आठ भागों और 120 अध्यायों में विभक्त किया है।

'चरक संहिता' में वर्णित औषधियों और सिद्धांतों से अभिप्रेरित होकर अमेरीका के न्यूयार्क शहर में प्रोफेसर आसलर नामक विद्वान ने सन् 1898 ईस्वी में एक 'चरक क्लब' की स्थापना की और उसमें चरक के चित्र को भी लगाया। आज यह आश्चर्य सा प्रतीत होता है कि आयुर्वेद में उस समय चिकित्सा की दृष्टि से शरीर को आठ स्वतंत्र भागों में बाँटा जा चुका था, जब सारी दुनिया चिकित्सा शास्त्र से लगभग अनभिज्ञ थी। ऐसा भी वर्णन मिलता है कि प्रत्येक अंग की चिकित्सा हेतु स्वतंत्र संहिताएँ बनाई गयी थीं। प्रत्येक अंग की चिकित्सा व उपचार के लिए स्वतंत्र परंपराएँ स्थापित की जा चुकी थीं और मजे की बात तो यह है कि अलग-अलग अंगों के चिकित्सक बड़े ही प्रतिष्ठा के साथ अपना स्वतंत्र व्यवसाय किया करते थे। आगे चलकर कुछ सामाजिक समस्याओं के कारण ये परंपराएँ या तो विखंडित हो गईं या लुप्त हो गयीं।

चरक के कालखण्ड का निर्धारण ईसा पूर्व 200-300 वर्ष के आस-पास माना जाता है। वैसे तो 'चरक संहिता' संस्कृत भाषा में लिखी गई है, लेकिन इसमें प्रयुक्त बहुत से शब्द पाली भाषा के हैं, जो बुद्ध काल में जनसामान्य की प्रचलित भाषा थी तथा भाषा विज्ञान के विद्वान भी इसे भगवान बुद्ध के बाद का प्रमाणित करते हैं। साथ ही चरक की शिक्षा-दीक्षा तक्षशिला विश्वविद्यालय में हुई, ऐसे प्रमाण मिलते हैं। आठवीं शताब्दी में इसका अरबी भाषा में अनुवाद हुआ। अनुवाद के माध्यम से यह पश्चिमी देशों तक पहुँचा।

शताब्दियों के पश्चात कुछ विद्वानों ने अपने परिश्रम व ज्ञानार्जन के आधार पर आयुर्वेद की मुख्य दो शाखाओं की संहिताओं का पुन: संस्करण किया, जिनका

पुन:संस्करण	खंड रूप में	संकलित
चरक संहिता	भेड़ संहिता	अष्टांग हृदय
सुश्रुत संहिता	कश्यप संहिता	अष्टांग संग्रह

उपयोग करके वैद्यों ने उसे पुनर्जीवित किया। आज भी कुछ प्रसिद्ध संहिताएँ उपलब्ध हैं, जिनका विवरण निम्नवत है।[1]

चरक की मूल संहिता मूलत: महर्षि अग्निवेश की काया चिकित्सा प्रणाली से अभिप्रेरित है और सुश्रुत की मूल संहिता भगवान धन्वंतरि की प्रणाली से अभिप्रेरित है। व्याधियों के उपचार के मामले में चरक संहिता तथा शल्य चिकित्सा के मामले में सुश्रुत संहिता श्रेष्ठ प्राचीन ग्रंथ हैं।

ग्रंथों में महर्षि चरक की संहिता के पश्चात सुश्रुत की संहिता का उल्लेख मिलता है। सुश्रुत का जन्म वाराणसी में हुआ

था।[1] सुश्रुत के बारे में कहा जाता है कि उन्होंने देवताओं के गुरु भगवान धन्वंतरि से चिकित्सा शास्त्र की शिक्षा प्राप्त की थी। परंतु ऐसे भी प्रमाण मिलते हैं कि उन्होंने काशी नरेश दिवोदास से शल्य चिकित्सा संबंधी ज्ञान हासिल किया था, जिन्हें ही कालांतर में धन्वंतरि के रूप में प्रसिद्धि मिल गई थी। सुश्रुत के जीवनकाल के संबंध में भी कुछ भ्रांतियाँ हैं। कई विद्वानों ने सुश्रुत को चरक से पूर्व पैदा होने का दावा किया है, परंतु सुश्रुत और बौद्ध भिक्षुओं से संबंध और बौद्धों के प्रति सुश्रुत की धारणा से यह प्रमाणित होता है कि सुश्रुत बुद्ध के बाद के थे, जबकि सुश्रुत संहिता का पुन: संस्करण करने में नागर्जुन का नाम भी आया है, जो एक बौद्ध भिक्षु थे। जैसे,

'यत्र-यत्र परोक्षे लिट् प्रयोगस्तत्र तत्रैव
प्रति संस्कृत सूत्रं ज्ञातव्यामिती।
प्रतिसंस्कर्ताऽपीह नागार्जुन एव।।'

सुश्रुत ने शल्यक्रिया के सिद्धांतों का बड़ा ही सरल भाषा में विवरण दिया है। सुश्रुत संहिता में **184** अध्यायों, **1120** रोगों, **700** औषधीय जड़ी-बूटियों, खनिज स्रोतों और जंतु स्रोतों पर आधारित क्रमश: **64** व **57** प्रक्रियाओं और आठ प्रकार की शल्य क्रियाओं का उल्लेख मिलता है।[1] सुश्रुत ने शल्यक्रिया के लिए उपयोग होने वाले जरूरी उपकरणों तथा शस्त्रों का उल्लेख अपनी संहिता में किया है। इस ग्रंथ में **24** तरह के स्वास्तिकों, **28** शलाकाओं तथा **20** तरह की नाड़ियों का वर्णन है।[1] शल्यक्रिया के लिए सुश्रुत ने तेज धार वाले शस्त्रों के उपयोग पर बल दिया था। वे चाहते थे कि सर्वोत्कृष्ट गुणवत्ता वाले इस्पात से ऐसे शस्त्र बनाए जाएँ, जिनसे बाल को भी दो हिस्सों में काटा जा सके। सुश्रुत ने शल्यक्रिया से पहले और बाद में शस्त्रों को विषाणुरहित बनाने पर भी जोर दिया था।[1]

उन्होंने **24** तरह की पट्टियों, **6** प्रकार के हड्डी खिसकने संबंधी रोगों, **12** प्रकार के हड्डियों के टूटने संबंधी बीमारियों का उल्लेख अपनी संहिता में किया है। सुश्रुत ने **26** तरह के नेत्र रोगों और **24** प्रकार के कान की व्याधियों का वर्णन किया है। सुश्रुत के द्वारा शल्यक्रिया के माध्यम से कर्कट रोग (कैंसर) के इलाज का भी वर्णन मिलता है। सुश्रुत संहिता में प्रसूति विज्ञान के अंतर्गत शल्यक्रिया (सिजेरियन) से बच्चा कराने, नाड़ियों की शल्यक्रिया (न्यूरोसर्जरी) करने तथा प्लास्टिक सर्जरी जैसी जटिल शल्यक्रिया का भी उल्लेख मिलता है। उन्होंने नाना प्रकार के तिनकों, काष्ठों, पत्थर, लौह, अस्थि, बाल, नख आदि का उपयोग किया। स्राव, दूषितव्रण, अन्त:शल्य, गर्भशल्य आदि को निकालने के लिए उन्होंने यंत्र, शस्त्र, क्षार, अग्नि आदि का उपयोग किया। जैसा कि आज कर्क रोग के उपचार के लिए लेजर पुंज का उपयोग किया जा रहा है, वैसे ही सुश्रुत के जमाने में भी लोहे की छड़ को गरम करके टी.बी. के व्रण को जलाया जाता था।

सुश्रुत संहिता से यह पता चलता है कि उस समय (ईसा पूर्व **400** साल पहले) उदर/पेट के रोगों का उपचार शल्यचिकित्सा द्वारा किया जाता था। इसके अलावा मोतियाबिंद, हर्निया, फ्रैक्चर, भगंदर, पथरी आदि का इलाज भी ऑपरेशन द्वारा किया जाता था। सुश्रुत को विशेष रूप से प्लास्टिक सर्जरी के क्षेत्र में उनके द्वारा किये गये योगदान के लिए याद किया जाता है। उन्होंने प्लास्टिक सर्जरी के सिद्धांतों की आधारशिला रखी।

भारतीय समाज में ऐसे प्रमाण मिलते हैं कि व्यभिचार करने पर दंड के रूप में नासिका काटने का प्रचलन था और इसका उल्लेख मनुस्मृति में भी हुआ है।[4] इस संदर्भ में ऐसे प्रमाण मिलते हैं, काटी गई नाक की जगह नई नाक की प्रतिस्थापना की जाती

भारत के प्राचीन चिकित्सा शास्त्र में चरक, सुश्रुत एवं जीवक का योगदान काफी महत्वपूर्ण रहा है, विशेषकर शल्य चिकित्सा शास्त्र के विकास में सुश्रुत एवं जीवक की अग्रणी भूमिका रही। तक्षशिला और नालंदा विश्वविद्यालयों में विश्व भर से छात्र चिकित्सा शास्त्र का अध्यय करने आते थे। आयुर्वेद, बौद्ध धर्म के साथ-साथ थाइलैंड, चीन, तिब्बत, जापान तक पहुँचा। वर्तमान शल्यचिकित्सा उत्तम संवेदनाहरण (Anaesthesia), प्रतिजैविक (Antibiotics) औषधियों एवं रक्त स्तंभक द्रव्यों (Haemostatic Agents) के बलबूते शिखर पर है, लेकिन यह एक अत्यंत जिज्ञासा का विषय है कि इन साधनों के अभाव में प्राचीन लोग जटिल शल्यकर्म कैसे करते थे?

थी। सुश्रुत ललाट पट की त्वचा का उपयोग करके कटी हुई नासिका की जगह पर नई नाक बना देते थे। आज भी यह प्रक्रिया ज्यों की त्यों व्यवहार में लाई जाती है।[1]

बौद्ध काल में आयुर्वेद अपनी उन्नति के चरम पर था और तक्षशिला का विश्वविद्यालय आयुर्वेद के लिए बहुत ही प्रसिद्ध हो चुका था। भगवान बुद्ध का उपचार करने वाले चिकित्सक जीवक ने भी यही से शिक्षा ली थी। जीवक बौद्धकालीन प्रसिद्ध चिकित्सक था।[1, 5]

जीवक मगध के राजा बिंबसार का पुत्र राजकुमार अभय का दत्तक पुत्र था। उन दिनों तक्षशिला का विश्वविद्यालय बहुत ही प्रसिद्ध था। अत: जीवक ने तक्षशिला से ही शिक्षा लेने का निश्चय किया और मगध छोड़कर तक्षशिला चला गया। मेधावी होने के कारण उसे चिकित्सा शास्त्र सीखने की अनुमति भी मिल गयी। सात वर्ष के कठोर परिश्रम के पश्चात उसने चिकित्साशास्त्र में निपुणता हासिल की।[5]

एक बार महाराज बिंबसार की पत्नी को भगंदर रोग हो गया। काफी इलाज के बाद भी जब वह ठीक नहीं हो रही थी, तो जीवक ने उसका इलाज किया और महारानी को पूर्ण रूप से ठीक कर दिया। उसके बाद उसे राजवैद्य की उपाधि पुरस्कार रूप प्रदान की गयी।[5] बाद में वह राजवैद्य जीवक से महाभिषक, महावैद्य और महाशल्यक (शल्यकर्ता/सर्जन) के रूप में प्रसिद्ध हुआ। राजा का चिकित्सक होने के कारण वह भगवान बुद्ध के संपर्क में आकर बौद्धधर्म का अनुयायी बन गया तथा समय के साथ दु:ख मुक्त होकर अर्हत अवस्था प्राप्त की।

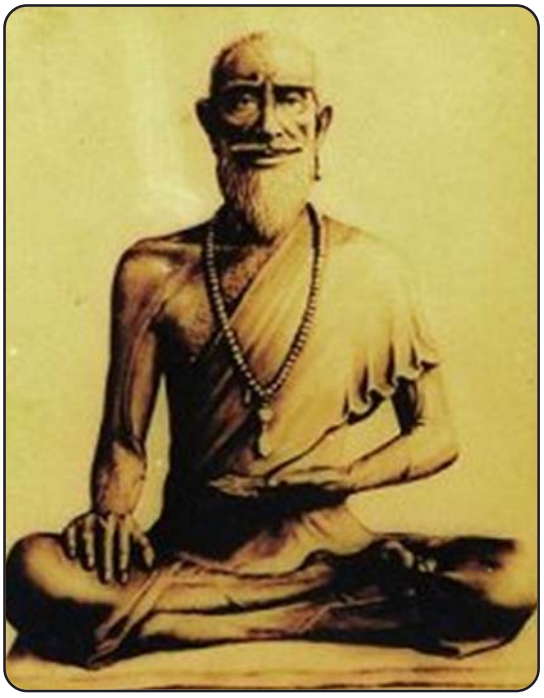

राजगृह के एक प्रसिद्ध श्रेष्ठी को सिरदर्द की पुरानी बीमारी थी। जीवक ने श्रेष्ठी के सिरदर्द के लिए उसके सिर की शल्यक्रिया की तथा उसकी खोपड़ी को पुन: सिलाई करके उस पर लेप लगा दिया और वह श्रेष्ठी ठीक हो गया।[5] ऐसी ही एक और घटना का जिक्र जरूरी है। एक बार वाराणसी का श्रेष्ठी अपने पुत्र की अस्वस्थता से बहुत दु:खी था। उसके पुत्र की अँतड़ी में गाँठ पड़ गई थी। जीवक ने शल्यक्रिया के द्वारा उसके पेट को चीरकर अँतड़ी की गाँठ को बाहर निकाला और फिर अँतड़ी की गाँठ को सुलझाकर उसे पुन: पेट के भीतर डाल दिया और पेट की सिलाई करके उस पर लेप लगा दिया।[5] इस प्रकार श्रेष्ठी का पुत्र पुन: स्वस्थ हो गया। इसी प्रकार जीवक ने समय-समय पर भगवान बुद्ध की भी चिकित्सा करके उन्हें रोगमुक्त किया।[5] जीवक द्वारा उज्जैन के राजा चंड प्रद्योत के उपचार के भी प्रमाण मिलते हैं। कहा जाता है कि चंड प्रद्योत बहुत क्रूर राजा था। इसीलिए उसके नाम के आगे 'चंड' विशेषण जोड़ दिया गया था। उसके निमंत्रण पर जीवक उज्जैन गया। जीवक ने राजा 'चंड' प्रद्योत का इलाज करके उसे ठीक कर दिया।

उन दिनों में काटी हुई अँतड़ियों को जोड़ने के लिए बड़े मकोड़ों के सिर का उपयोग किया जाता था। कटी हुई अँतड़ियों के दोनों छोर को एक दूसरे के नजदीक लाकर बड़े मकोड़ों से उसे इस तरह से कटवाया जाता था कि उससे अँतड़ियाँ आपस में जुड़ी रह जाएँ। तत्पश्चात मकोड़ों के सिरों को काटकर उसे अँतड़ियों से जुड़ा हुआ छोड़ दिया जाता था और इसप्रकार शल्य चिकित्सा के लिए काटी गई त्वचा/अंग स्वत: जुड़ जाते थे। मकोड़ों के जबड़े अतड़ियों के जुड़ने तक उसे पकड़कर रखते थे और चूँकि मकोड़ों के जबड़े जैविक पदार्थ हैं, इसलिए कुछ ही दिनों में रोगी का शरीर उन्हें स्वत: ही अपचयित कर लेता था। आज के विकासशील युग में जो कार्य जी-आई स्टेपलर्स से किया जाता है, वही कार्य प्राचीन भारत में जैविक विधि से किया जाता था। साथ ही त्वचा आदि भागों की सिलाई करके जोड़ने के लिए लंबे बालों, सिल्क के धागों तथा सूत का इस्तेमाल हुआ करता था।

मौर्य काल (**363-211** ईसा पूर्व) में आयुर्वेद बहुत विकास कर चुका था। इसका उल्लेख करते हुए मेगस्थनीज ने अपनी पुस्तक 'इण्डिका' में लिखा है कि भारतीय चिकित्सक अपने ज्ञान के बल पर नि:संतानों को संतान पैदा करा सकते हैं और दवाइयों के बल पर नर या मादा बच्चा पैदा करा सकते हैं।

चंद्रगुप्त के बाद मौर्य वंश का सबसे प्रतापी राजा अशोक था। उसने आयुर्वेद के विकास हेतु विशेष प्रबंध किया। अशोक के शासनकाल में सारे देश के आयुर्वेद के आचार्यों (चिकित्सकों) की सहायता और जनसामान्य की स्वास्थ्य रक्षा के लिए बड़े पैमाने पर औषधियों के पौधों का रोपण कराया गया। इतना ही नहीं

जिन औषधियों के पौधे जहाँ नहीं थे, वहाँ दूसरी जगहों से पौधों को लाकर रोपित कराया गया। अशोक के शासन में पशुओं की चिकित्सा का प्रबंध किया गया। साथ ही उसने दक्षिण के पड़ोसी राज्यों चोलों, पांड्य, शालिपुत्रों, केलपुत्रों, ताम्रपर्णी और यवन में भी आयुर्वेद का विस्तार कराया और उनकी जनता के स्वास्थ्य की रक्षा की।

कनिष्क के शासनकाल में भी चरक के ही परंपरा के किसी चिकित्सक को राजवैद्य बनाने का उल्लेख मिलता है। कनिष्क ने भी सिंधु जनपद, सौवीर, सौराष्ट्र, वहलीक आदि राज्यों में चरक संहिता के प्रचलन को बढ़ावा दिया। इस बात का उल्लेख श्री सुरेंद्रनाथ गुप्त ने अपनी पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ इंडियन फिलासफी' में भी किया है।

लेकिन ईसा पूर्व **200** वर्ष में सामाजिक परिस्थितियों में वर्ग संघर्ष तीव्र हो गया, इसलिए आयुर्वेद पढ़ने के लिए द्विज होना अनिवार्य हो गया। द्विज बनाने के लिए उपनयन संस्कार तो होता ही था, लेकिन चिकित्सा शास्त्र (आयुर्वेद) का अध्ययन हेतु पुन: उपनयन संस्कार कराना पड़ता था, अर्थात जिन जातियों या प्रजातियों को द्विज बनने का अधिकार नहीं था, उन्हें आयुर्वेद पढ़ने का अधिकार बिल्कुल खत्म हो गया।[1]

सुश्रुत संहिता में भेद पूर्ण उपचार का उल्लेख भी मिलता है। उपचार की विधियाँ वर्ग विशेष के अनुसार होती थीं। ब्राह्मणों और अन्य वर्गों के लिए उपचार की विधि भिन्न-भिन्न होती थी। सुश्रुत में बौद्धकालीन शब्दों का अधिक उपयोग हुआ है। जैसे विशिखा और भिक्षुसंघाटी। इसमें (भिक्षुसंघाटी) शब्द का उपयोग निंदनीय वस्तु के रूप में किया गया है। इससे यह प्रमाणित होता है कि सुश्रुत के समय बौद्ध भिक्षु घृणा की दृष्टि से देखे जाते थे। इतिहास में इस बात का उल्लेख मिलता है कि बौद्ध और ब्राह्मणों में परस्पर विरोध रहा है, अर्थात उपरोक्त दृष्टांतों से यह बात सिद्ध होती है कि चरक संहिता के पश्चात सुश्रुत संहिता की रचना हुई है, जब पुष्यमित्र शुंग ने ब्राह्मणों का राज्य स्थापित किया। इसी क्रम में तक्षशिला विश्वविद्यालय को आग के हवाले कर दिया गया। विद्यालय की सारी किताबें (पांडुलिपियाँ) जलकर खाक हो गईं, जिससे समाज को बहुत क्षति पहुँची। सदियों से संचित ज्ञान वर्ग संघर्ष का शिकार हो गया।

तदनंतर पूरे भारतीय समाज में उथल-पुथल मच गया। बौद्ध भिक्षु जो जनसामान्य के लिए चिकित्सक का भी काम करते थे, उन्हें वर्ग संघर्ष के कारण प्रताड़ित किया जाने लगा और बड़े पैमाने पर उनकी हत्याएँ की गई। इस प्रकार बौद्ध भिक्षु जंगलों व पहाड़ की कंदराओं में छुपने लगे और लुक-छिपकर चिकित्सक का काम करने लगे, जिसके कारण इस पेशे के सम्मान में गिरावट आई। वैसे तो वेदकालीन समय में भी चिकित्सक का स्थान बहुत महिमामंडित नहीं था, बल्कि वैदिक काल में चिकित्सक को घृणित नजर से देखा जाता था। केवल 'अंबास्था' जाति के लोगों को ही चिकित्सा का व्यवसाय करने की अनुमति थी।[1] मनुस्मृति के अनुसार ब्राह्मणों को चिकित्सा/और विष निकालने का उपाय जैसे विषयों की शिक्षा से वंचित रखा गया है। उन्हें केवल वेद और धर्मशास्त्रों के अध्ययन और अध्यापन की अनुमति थी। चिकित्सा शास्त्र और तर्क शास्त्र के अध्ययन से वैज्ञानिक कौतूहल जागृत होता है, जिससे धर्म द्वारा स्थापित मान्यताओं पर प्रश्न उठने की संभावना होती है।[2] इसीलिए चिकित्सा और तर्क शास्त्र को हेय दृष्टि से देखा गया। लेकिन बौद्ध काल में सभी प्रकार के ज्ञान और दर्शन के गूढ़तम अध्ययन की ओर झुकाव का प्रभाव चिकित्सा शास्त्र पर भी पड़ा और अब चिकित्सक को कुछ सम्मान की दृष्टि से देखा जाने लगा था। लेकिन वर्ग संघर्ष ने चिकित्सकों के सम्मान के साथ-साथ चिकित्सा शास्त्र का बहुत बड़ा नुकसान कर दिया।

यही कारण है कि संसार के जिन देशों ने बौद्ध धर्म को अपनाया था अथवा जिन देशों के विद्वानों ने भारत में आकर भारतीय चिकित्सा शास्त्र का अध्ययन किया था, उन देशों में आज भी भारतीय चिकित्सा पद्धति (आयुर्वेद और बौद्धकालीन चिकित्सा पद्धति) का बड़े पैमाने पर उपयोग होता है और भारत में जहाँ महान चिकित्सकों ने जन्म लेकर चिकित्सा विज्ञान को चरम पर पहुँचाया, वहीं पर आयुर्वेद व प्राचीन शल्य चिकित्सा शास्त्र के तरीके विलुप्त होने के कगार पर पहुँच गये हैं।

संदर्भ ग्रंथ:

1. Sushruta - A General Surgeon and Rising of Ayurveda
2. Sushruta and our Heritage
3. सुश्रुत संहिता
4. मनुस्मृति
5. अग्रपाल राजवैद्य 'जीवक' - विपश्यना विशोधन विन्यास

- मुख्य विशेषज्ञ (शल्य चिकित्सा)
विशाखा स्टील जनरल अस्पताल
राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड
मोबाइल: **+91 7702778478**

कहानी

अनचाही बेटी

- श्रीमती सुधा गोयल -

मम्मा!

बहुत समय बाद पत्र लिख रही हूँ। याद नहीं कि शादी के बाद कभी आपको पत्र भी लिखा है। बस दो चार वाक्यों में आप मेरी कुशलता पूछती रहीं और उत्तर में मैं भी कुछ औपचारिक शब्द उड़ेलती रही। मेरा, आपका और पापा का भावात्मक संबंध बस यहीं तक रहा। आपने कभी यह जानने या देखने की कोशिश नहीं की कि मैं अपने ससुराल में खुश हूँ भी या नहीं। आपने कभी भैया को लेने नहीं भेजा। पापा तो मुझे लेने क्यों आते? फिर भैया कौन छोटे बालक हैं। उन्हीं का मन मुझसे मिलने का नहीं रहा होगा, वरना क्या मेरा आग्रह ठुकरा पाते।

मम्मा, आप नाराज न हों। मैं आपको कोई उलाहना नहीं दे रही। बल्कि आप द्वारा धकियायी गई मैं, अपने आंगन में बैठी कल, आज और कल की जुगाली करते-करते कई सवाल स्वयं से पूछ बैठी और जब उत्तर नहीं मिला तो सोचा, शायद आप ही कोई मार्ग सुझा सकें। फोन पर तो औपचारिक बातें ही हो सकती हैं। फिर कोई सुन न ले, इसका भी तो खतरा बना रहता है। सोचा, पत्र लिखकर ही पूछूँ। सो लिखने बैठ गई।

मम्मा, पहला सावन आया है। मैंने देखा है कि पहली तीज पर सभी के मायके से शगुन आता है। आपने भी अपने सामर्थ्य भर दीदियों को भेजा था। मैं इंतजार कर रही थी कि मम्मा अधिक नहीं सही, पर थोड़ा जरूर कुछ भेजेंगी। मन में शंका उठती - यदि नहीं भेजा तो सास-ससुर क्या कहेंगे? मैं जैसे अपनी ही नजरों में बौनी हो रही थी। आपने फोन करना भी उचित नहीं समझा। मैं घर में सबसे नजरें चुरा रही थी। अजीब सी बेचैनी हो रही थी। सबसे ज्यादा डर मुझे रोहित का था। पता नहीं क्या कहेंगे? क्या सोचेंगे? शादी को अभी दो ही महीने हुए हैं। पर मम्मा, तीज से एक दिन पहले ससुर जी ने बताया कि पापा ने ही दो हजार का ड्राफ्ट भेजा है। सुनकर मेरी आँखें खुशी से चमक उठीं। ससुर जी ने अपने पर्स से दो हजार निकालकर मुझे देते हुए कहा - 'बेटी श्वेता! रोहित के साथ बाजार जाकर अपने लिए एक अच्छी साड़ी और अपने श्रृंगार का सामान ले आना। फल-मिठाई और तुम्हारी सास की साड़ी मैं ले आऊँगा।'

मैंने रुपये लेकर ससुरजी के पाँव छू लिए। वे गद्गद हो उठे - 'हमेशा प्रसन्न रहो बहू' का आशीर्वाद दिया और कहा कि 'कई दिन से शायद तुम इसलिए परेशान थी कि क्या पता तुम्हारे पिताजी शगुन भेजेंगे या नहीं। देखा, तुम्हारे पापा तुम्हारा कितना ध्यान रखते हैं। अपने सभी बच्चों का माँ-बाप बहुत ध्यान रखते हैं। बस, तुम प्रसन्न रहा करो।'

मेरी आँखों से प्रसन्नता के आँसू लुढ़क पड़े। तीन-चार दिन ऐसे ही व्यस्त निकल गये। फिर याद आया कि मम्मी को फोन करके बता दूँ कि कैसी साड़ी खरीदी है।'

मम्मा, जब फोन पर तुम्हें बताया था, तब तुम चौंक उठी थी। लेकिन मैं अपनी प्रसन्नता में उसे समझ नहीं पाई थी। रक्षाबंधन पर भैया को भेजने का आग्रह किया था, लेकिन आपकी ओर से गोलमोल उत्तर मिला। रक्षाबंधन से एक दिन पहले ससुर जी ने ऐलान किया कि कल श्वेता रोहित को राखी बांधने जाएगी।' तब मैंने कहा था कि 'लेकिन पापाजी, दीदी भी तो आएँगी।'

ससुर जी ने योजना बताई, 'हाँ, तुम्हारी ननद रात को आ जाएगी और प्रात: रोहित को राखी बांध देगी। वहाँ से विपुल आए या यहाँ से श्वेता जाए - एक ही बात है', सुनकर मैं गद्गद हो उठी। दूसरी बार मायके जा रही थी। प्रसन्नता के साथ-साथ मन में कहीं चुभन भी थी कि यदि भैया आकर ले जाते तो ...। फिर सोचा - हम आठ बहनें, भैया किस-किस के घर जायेंगे।

जब हम आठ बहनें भाई को राखी बांधतीं, भैया की कलाई राखियों से भर जाती। मम्मा, आपकी आँखें भी तरल हो उठतीं। आप सोचतीं - एक अकेला भाई आठ राखियों का बोझ कैसे उठाएगा।

आपको उम्मीद नहीं थी कि मैं इस प्रकार बिना किसी पूर्व सूचना के पहुँच जाऊँगी। मुझसे मिलकर वह खुशी आपके चेहरे पर नहीं आई, जिसकी मुझे चाह थी। आपने ऊपरी मन से रोहित का स्वागत किया। आप शायद अपनी ही दीनता में संकुचित हो रही थीं। पापा को देखकर लगा कि अभी-अभी रो देंगे।

रात को मैंने सुना - पापा आपको डाँट रहे थे, 'शोभा फोन करके तू ने ही इन्हें बुलाया होगा। कुछ समझती क्यों नहीं?

> पापा मुझसे कभी नहीं बोले। हमेशा मुझसे नफरत करते। उन्हें दूसरा बेटा न मिल पाने की मूल वजह जैसे मैं ही हूँ। मैं पास जाने की कोशिश करती तो दुत्कार दी जाती। फिर भी पापा की सेवा में कमी न करती। मैं ट्यूशन करती, जो पैसे मिलते, उससे आप मेरा दहेज इकट्ठा करतीं। बहुत मन करता कि पापा कभी बेटी कहकर बुलायें। कभी सिर पर हाथ रखें। मैं आप सबके प्यार को तरस गई। अपने ही लोगों के बीच कितनी बेगानी हो गई। यहाँ तक कि विदाई के समय न आपका कंधा मिला, न पापा का आशीर्वाद। अपने स्नेहाश्रु भी अपने आंगन में न ढुलका सकी। इतनी पराई आप सबके लिए क्यों हुई?

अभी तो विवाह का कर्ज ही नहीं उतरा, ऊपर से हजार रुपये का खर्च और आ गया।' आपने पिताजी से कहा था - 'जरा धीरे बोलिए। दामाद सुनेंगे तो क्या सोचेंगे? मैंने किसी को नहीं बुलाया है। मैं क्या समझती नहीं? इसीलिए मैंने तीज पर शगुन नहीं भेजा। अब आ ही गये हैं तो कुछ तो करना ही पड़ेगा।'

सुनकर मैं हतप्रभ रह गई। पापा ने रुपये नहीं भेजे थे। ससुर जी ने अपने पास से झूठ बोलकर दिये थे। मेरी उदासी उनसे छिपी नहीं थी। सास-ननद की नजरों में गिरने से बचा लिया था उन्होंने। कितने महान हैं वे। मेरा मन श्रद्धा से भरता चला गया और मेरी आँखें भीगती रहीं।

अगले दिन भैया को राखी बांधी। भैया ने एक सौ एक रुपये थाली में रखे। मैंने एक का नोट उठाकर माथे से लगा लिया - 'भैया, आपके रुपये नहीं, आशीर्वाद चाहिए और इतना अधिकार भी कि जब आपसे मिलने का मन करे तो नि:संकोच आ सकूँ, बोझ की तरह नहीं, अपनों की तरह।'

'यह क्या कह रही है श्वेता? तुझे यहाँ आने से किसने रोका है?' मम्मा आपने कहा जरूर था, लेकिन कहने में न अधिकार का बोध था न ममता का भाव।

राखी का बोझ मन पर उठाये मैं लौट आई। जब-जब त्योहार आये, ससुरजी इसी प्रकार आपका नाम लेकर मनीआर्डर या ड्राफ्ट आने की बात सबके सामने कहते रहे। एक बार सासू माँ अकड़ गईं - 'कह देना अपने समधी से, रुपये क्या हमने देखे नहीं हैं। यदि विपुल स्वयं नहीं आएगा तो हम रुपये वापिस कर देंगे। आप कह दें, नहीं तो मैं फोन कर दूँगी।'

इस धमकी से ससुर जी विचलित जरूर हुए। फिर स्वयं को संभाला और भैया को तुरंत यहाँ आने का आदेश दिया। भैया जब घर आये तो खूब सारे सामान से लदे हुए थे। घर में सब खूब प्रसन्न थे। भैया का खूब स्वागत हुआ। चलते समय अच्छी-भली विदाई भी हुई। भैया से एकांत में बातें करने का मौका मुझे नहीं मिला। मैं मन ही मन हैरान-परेशान थी कि पापा ने इतना सारा सामान कैसे भेजा होगा। स्वयं मुझे लड़की होने पर बेहद अफसोस हुआ।

चलते समय भैया ने सिर पर हाथ रखकर कहा - 'श्वेता यह घर तेरे लिए स्वर्ग है, अपने स्वर्ग को स्वर्ग बनाये रखना। हम सब तेरी ओर से निश्चिंत हुए।'

मैं नहीं समझ पाई कि भैया ने ऐसा क्यों कहा। मम्मा, मैं एक साल तक आपसे नहीं मिली। आप भी मुझसे मिलने नहीं आई। इसी बीच राधिका का जन्म हुआ। बेटी पैदा हुई है, यह सुनकर मैं अपराध बोध से गड़ गई, क्योंकि अपने बेटी होने का अपराध बोध अभी तक ढो रही थी। लेकिन उल्टे यहाँ तो सास-ससुर ने मुझे बधाई दी थी और कहा - 'श्वेता बेटी, तुमने हमें यह नन्हा फूल देकर दादा-दादी बना दिया है। इसे संभालकर रखना।'

मम्मा, उसका जन्मदिन खूब धूमधाम से मनाया। मेरी निगाहें दरवाजे पर लगी रहीं। लेकिन जिस घर में बेटियाँ ढोर-डांगर की तरह पली-बढ़ी हों, वहाँ बेटी को बेटी पैदा होने पर मातम ही होगा। आपने तो सुनकर सिर पीट लिया था।

मम्मा, मैं आपसे कोई शिकायत नहीं कर रही। हाँ एक अंतर आपको बता रही हूँ। मैं आपकी अनचाही संतान हूँ और मेरी बेटी मेरे पहले प्यार की सुगंध और अपने आंगन का फूल। हमारी तरह खर-पतवार नहीं। आप नहीं चाहती थीं कि मैं जन्म लूँ, लेकिन आप मेरा जन्म लेना रोक ही नहीं सकती थीं। आपको तो बेटा चाहिए था। बेटा आपको दूसरा मिला नहीं और आठ-आठ बेटियों का बोझ उठाना पड़ा। आप और पापा में रोज वाक्-युद्ध होता और उस युद्ध का कारण हम बहनें होतीं। हमें जाने कितनी बार जीना और मरना पड़ता।

मम्मा आप सबसे कहतीं - जैसे घर में गाय पल रही है, ये भी पल जाएँगी। आप नहीं जानती थीं कि आप क्या कह रही हैं? गाय तो बदले में दूध देती है, जबकि हमने तो आपको दुश्चिंताएँ दीं। ढोर केवल भूसा खाकर पल जाते हैं, पर हमें तो कपड़ा-रोटी और शिक्षा चाहिए थी। शादी के लिए पैसा चाहिए था। ढोर बोल नहीं सकते, पर हम लड़कियों के पास अपना अलग-अलग दिमाग है।

मम्मा, जब आप साधनविहीन थीं तो हम मांस के लोथड़ों को क्यों जन्म देती रहीं। आपने कभी नहीं सोचा कि अपने

परिवार और समाज में हमारी हस्ती क्या थी? हमारी ताई, चाची, बुआ, मामा, मौसी किसी के भी तीन-तीन बच्चों से अधिक नहीं हैं। सब कितनी खुशहाल हैं। सभी आपको समझाती रहीं। हँसी-हँसी में कहतीं - 'भाभी, आपकी बेटियों के नाम याद रखना भी कितना कठिन है।' पता नहीं, आप यह सब कैसे सह पाती थीं। मुझे बड़े होने पर पता चला कि आपने कई घंटों तक मुझे नहीं छुआ था। दो दिन तक दूध नहीं पिलाया था। आपने सोचा होगा कि मैं मर जाऊँगी, लेकिन मैं जी गई।

मेरी प्यारी मम्मा, मुझे याद नहीं कि मैंने कभी कोई नया कपड़ा पहना हो। हमेशा उतरन पहनती रही। पुरानी किताबें पढ़ती रही। जूठन खाती रही। बुआ और मौसी अपने-अपने बच्चों की उतरन हमें दे जातीं। उन्हीं को लेकर हममें छीना-झपटी मचती, क्योंकि पुराने कपड़े भी इतने रेशमी, इतने अच्छे होते कि हम उन जैसे कपड़ों को पहनने की क्या, छूने की भी नहीं सोच सकती थीं। गहरे प्रिंट में सुंदर-सुंदर कपड़े बड़ी बहन ले लेतीं, आप भी कोई अच्छा सा स्वेटर विपुल भैया के लिए निकाल लेतीं और मुझे बचा हुआ जो भी मिलता, उसी में संतुष्ट होना पड़ता।

पापा मुझसे कभी नहीं बोले। हमेशा मुझसे नफरत करते। उन्हें दूसरा बेटा न मिल पाने की मूल वजह जैसे मैं ही हूँ। मैं पास जाने की कोशिश करती तो दुत्कार दी जाती। फिर भी पापा की सेवा में कमी न करती। मैं ट्यूशन करती, जो पैसे मिलते, उससे आप मेरा दहेज इकट्ठा करतीं। बहुत मन करता कि पापा कभी बेटी कहकर बुलायें। कभी सिर पर हाथ रखें। मैं आप सबके प्यार को तरस गई। अपने ही लोगों के बीच कितनी बेगानी हो गई। यहाँ तक कि विदाई के समय न आपका कंधा मिला, न पापा का आशीर्वाद। अपने स्नेहाश्रु भी अपने आंगन में न ढुलका सकी। इतनी पराई आप सबके लिए क्यों हुई?

बड़ी बहनें आतीं। उनके बच्चों और पतियों की आवभगत करती। बच्चों को खिलाती और सब मुफ्त की नौकरानी जैसा व्यवहार करतीं। क्या मैं हाड़-माँस की इंसान नहीं थी। मैं थकती नहीं थी। दिन के चौबीस में से बीस घंटे मेरे काम के होते। आप भी अपनी अन्य बेटियों को लाड़ लड़ातीं। उनके बच्चों को प्यार करतीं और मैं आपकी बेटी आपके दो मीठे बोलों को तरसती रहती।

मम्मी, तभी आपने मेरा रिश्ता बिना सोचे-समझे ऐसे लोगों के साथ कर दिया, जो देखने पड़ोसी की लड़की को आये थे और लड़की पसंद न आने पर वापस लौट रहे थे। डांट-फटकार कर, सजा-धजाकर आपने मुझे उनके सामने भेज दिया। मैं नहीं समझ पा रही थी कि अचानक मेरे साथ क्यों हो रहा है? क्या मैं हाट में बिकनेवाली कोई गाय, भैंस, बकरी थी, एक पसंद नहीं आई तो दूसरी पसंद कर ली। मेरी इच्छा-अनिच्छा आप कुछ भी नहीं जानना चाहीं। इसे भी मैंने आपका प्रसाद समझ ग्रहण किया।

सारी बहनों और रिश्तेदारों ने मिलकर बोझ की गठरी सा मुझे ससुराल तक पहुँचाकर फिर पीछे मुड़कर नहीं देखा। मैं मरूँ या जिऊँ, इससे किसी को कोई मतलब न था। अनचाही संतान हमेशा बोझ होती है, पर मैं आप पर बोझ नहीं हूँ मम्मी। अब मुझे बोझ समझना बंद करिए।

जिसे आपने बोझ की गठरी समझा, मेरे ससुर ने उसे माथे से लगाकर रखा। मुझे वह अपनापन और प्यार दिया है, जिसके लिए मैं हमेशा तरसती रही। गहने, कपड़े व समस्त ऐशो-आराम के बीच आपके साथ बिताए दिन मुझे दुर्घटना से लगते हैं। ऐसी कोई स्मृति नहीं, जिसे संजोकर रख सकूँ, जिसे याद कर मेरी आँखें नम हो जाएँ। आपके द्वारा दी गई दहेज की साड़ियाँ ऐसे ही संदूक में बंद पड़ी हैं। जब आपकी याद आती है, ऐसे ही खोलकर सहला लेती हूँ और सोचती हूँ मम्मा मेरे लिए इतना ही कर सकती थीं।

आपने जिस साड़ी को पहनाकर मेरी विदाई कराई थी, वह भी चाची की बहू की पहनी और पल्लू की कटी साड़ी थी। आपने उसे रफू कराना भी आवश्यक नहीं समझा। ससुर जी की निगाह उस पर पड़ गई। मैं झूठ बोली - 'गाड़ी में बैठते समय कील में अटककर खिंच गई।'

ससुर जी ने उसे दुबारा पहनने नहीं दिया। आपने ऐसी ही पुरानी पाँच साड़ियाँ दहेज के नाम पर दीं। विवाह के अगले दिन ही सासू माँ ने मेरे सामने साड़ियों का ढेर लगा दिया। ऐसी साड़ियाँ जिनके विषय में मैं सोच भी नहीं सकती थी और तभी से वे पाँचों साड़ियाँ संदूक में बंद पड़ी हैं।

क्या ऐसा नहीं हो सकता कि जिन्होंने कृपावश वे साड़ियाँ मुझे दीं, आप उन्हीं को धन्यवाद सहित लौटा दें। कई बार मन हुआ कि इन्हें निकालकर कामवालियों को सौंप दूँ, लेकिन नहीं दे सकी। आखिर है तो वे मेरे दहेज की ही साड़ियाँ, जो मुझे मेरे अतीत और विवाह की स्मृति कराती रहेंगी।

मम्मा, आप मेरी माँ हैं। आप और पापा का खून मेरी धमनियों में दौड़ रहा है। आप न चाहें, फिर भी आप आठ बेटियों की माँ कहलाएँगी। जब भी गिनेंगी, गिनती आठ पर आकर ही रुकेगी। संभव है, आठ बेटियों की माँ कहलाना आपको भी अच्छा न लगता हो, इसी से आपका यह व्यवहार हो। फिर भी मम्मा, मैं आपको चिंतामुक्त कर रही हूँ। आपकी अनचाही बेटी अपने घर-संसार में सुखी है।

- 290-ए, कृष्णानगर
डॉ दत्तालेन
बुलंदशहर-203001, उत्तर प्रदेश
मोबाइल: +91 9917869962
ई-मेल: sudhagoyal1948@yahoo.com

लेख

यीशु के अंतिम दिन

- श्री सुधीर निगम -

यीशु जब गलील प्रदेश से भ्रमण करते हुए यरुशलम आए तो लोगों ने अपनी चादरों के पांवड़े बिछाए, खेतों से पत्तियाँ तोड़कर उनके कदमों तले डालीं। उनके अनुयायी 'परमेश्वर-पुत्र' के रूप में उनका जयकार कर रहे थे। 'परमेश्वर-पुत्र' का यहूदी अर्थ है - मसीही राजा। यीशु एक मंदिर में पहुँचे। यहूदी अब मूर्ति-पूजक नहीं रह गए थे। मूर्ति-पूजा त्यागने का उपदेश यहूदियों के आदि पैगम्बर हजरत इब्राहीम ने दिया था। ईसा उन्हीं की संतति थे। परंतु अब उनके धर्म का मुख्य आचार अग्नि में पशु या अन्य वस्तुओं का हवन करके यहोवा को (जो पहले 'इलोहा' के नाम से पूजित था) संतुष्ट करना था, जिससे लोक में उनका और उनकी जाति का कल्याण हो। मंदिर में यीशु ने देखा कि गैर-यहूदियों को मंदिर के भीतर जाकर प्रार्थना या हवन करने की अनुमति नहीं थी। अत: वे बाह्य-आंगन तक ही सीमित रहते थे। पुरोहितों ने मंदिर को पूरा बाजार बना रखा था। वहाँ बलि-पशुओं की बिक्री हो रही थी। मंदिर का कर चुकाने के लिए रोमन सिक्कों को 'शुद्ध' पुरोहिती मुद्रा में बदलने की दूकानें लगी थीं।

मंदिर में क्रय-विक्रय करने वालों को यीशु वहाँ से निकालने लगे। उन्होंने मुद्रा-विनिमय करने वालों की मेजें और कबूतर बेचने वालों की गद्दियाँ उलट दीं तथा मंदिर से होकर लोगों को सामान आदि नहीं ले जाने दिया'-(मरकुस 11/15-16)। लोगों को लगा कि यीशु रोष में आकर हिंसात्मक आंदोलन चलाने पर उतारू हैं, पर वास्तविकता तो यह थी कि वह सभी लोगों के लिए प्रभु का द्वार खोलने हेतु नबी के अधिकार से सुधारक के धर्म का उत्साह से प्रदर्शन कर रहे थे। उन्होंने उपस्थित लोगों से कहा, 'क्या धर्मशास्त्र में यह नहीं लिखा है कि प्रभु का घर सब जातियों के लिए प्रार्थना-घर कहलाएगा। किंतु इस मंदिर को तो 'डाकुओं' का अड्डा बना दिया गया है।'

यीशु के आंदोलन की चोट से यहूदी समाज के महापुरोहित, शास्त्री और धर्म वृद्ध तिलमिला उठे। वे समझ गए कि मंदिर के शुद्धीकरण के रूप में यीशु मसीही सुधार-कार्य का दावा कर रहे थे, जिसकी सफलता से उनकी पुरोहिताई चौपट हो जाती और अस्तित्व खतरे में पड़ जाता। अत: यीशु को हटाना उनके लिए आवश्यक हो गया। परंतु उनके विरुद्ध न कोई आरोप था और न उसका साक्ष्य। अत: उन्हें शब्दजाल में फाँसने की योजना बनी।

दूसरे दिन जब यीशु मंदिर में टहल रहे थे, महापुरोहित आदि उनके पास पहुँचे। उन्होंने पहुँचते ही प्रश्न दागा, 'आप किस अधिकार से ये कार्य कर रहे हैं?' वहाँ भीड़ एकत्र हो चुकी थी। भीड़ की मानसिकता को आकर्षित करने के लिए यीशु ने कहा, 'पहले मेरे एक प्रश्न का उत्तर दो, फिर मैं तुम्हें बताऊँगा कि मैं किस अधिकार से ये कार्य करता हूँ। प्रश्न है - बपतिस्मा (शुद्धि-स्नान) देने का अधिकार युहन्ना को परमेश्वर की ओर से प्राप्त था या मनुष्य की ओर से?'

जकरियाह के पुत्र युहन्ना सन् 27 से सुधारक और मसीही कार्य के अग्रदूत के रूप में कार्य करने लगे थे। वे लोगों को इस कार्य में संलग्न करने के लिए यरदन नदी में 'बपतिस्मा' (शुद्धि-स्नान) देते थे। सुधारक के रूप में उन्होंने गलील देश के चरित्रहीन और क्रूर स्थानीय शासक हेरोदोस (शासन-काल 4 ई.पू. से 31 ई.) की इस बात के लिए निंदा की थी कि उसने सौतेले भाई की सुंदर पत्नी हेरोदियास को अपहृत कर अपनी रानी बना लिया था। हेरोदियास ने ही राजाज्ञा से कैदखाने में पड़े युहन्ना की नृशंस हत्या करवा दी थी। लोग युहन्ना को नबी मानते थे।

यीशु का प्रश्न सुनकर पुरोहित आदि आपस में विचार करने लगे कि यदि वे यह कहते कि युहन्ना को बपतिस्मा का अधिकार 'परमेश्वर की ओर से' मिला था, तो यीशु प्रतिप्रश्न करेंगे कि हमने युहन्ना पर विश्वास क्यों नहीं किया और क्यों उसे मर जाने दिया। यदि 'मनुष्यों की ओर से' अधिकार मिलने की बात कहें, तो जनता रुष्ट हो जाएगी, क्योंकि वह उन्हें नबी मानती है। अत: उन्होंने यही कहा, 'हम नहीं जानते।'

'तो मैं भी तुम्हें नहीं बताता कि मैं किस अधिकार से काम करता हूँ', यीशु ने कहा। पुरोहित आदि उस समय तो चले गए, परंतु चुप नहीं बैठे। यीशु को शब्दजाल में फाँसने के लिए उन्होंने राजा हेरोदोस के दल के सदस्यों (संत लूका के अनुसार गुप्तचर पुलिस) तथा अपने अनुयायियों को यीशु के पास भेजा। वे यीशु के पास पहुँचे और विनम्रता से पूछा- 'गुरु जी, (यहूदी समाज में अनेक सम्मानोपाधियाँ प्रचलित थीं, यथा- 'रब्बी' (श्रीमान), 'अब्बा' (पिता), 'मारी' (स्वामी), मोर (आचार्य) आदि। यीशु अपने

यीशु के साथ दो डाकू भी क्रूस पर चढ़ाए गए, एक दाहिनी ओर दूसरा बाईं ओर। इससे पूर्व में की गई भविष्यवाणी सिद्ध हो गई कि यीशु अपराधियों के साथ गिने जाएँगे। उधर से निकलने वाले लोग यीशु की निंदा करते हुए सिर हिला-हिलाकर कह रहे थे, 'हे मंदिर को गिराने वाले और तीन दिन में उसे बनाने वाले अपने को बचा। अगर तू परमेश्वर का पुत्र है तो क्रूस से उतर आ।' वे नहीं जानते थे कि मंदिर को गिराने की बात कहकर उन्होंने उसके विनाश के विषय में चेतावनी दी थी (जो 40 वर्ष बाद ठीक निकली जब सन् 70 में रोमन सेना ने इसे नष्ट कर दिया) और मृत्यु से पुनरुत्थान को उन्होंने अध्यात्मिक मंदिर का नवनिर्माण बताया था।

विनम्र आचरण से 'गुरु' थे।) हम जानते हैं कि आप सच्चे हैं, सच्चाई से परमेश्वर के मार्ग का उपदेश देते हैं, आप मुँह देखी बात नहीं करते, क्योंकि आपको किसी का भय नहीं है। हमें बताइए कि आपके विचार से, व्यवस्था की दृष्टि से (यहूदियों द्वारा) रोमन सम्राट को कर देना उचित है या नहीं।' (मत्ती 22/16-17) अपना शब्द जाल फेंककर वे सोच रहे थे कि यीशु जनता को कर देने से वर्जित करेंगे, तो वे इजराइल में रोमन साम्राज्य के विरुद्ध एक उग्र राष्ट्रवादी के रूप में बंदी बनाए जा सकते हैं। इसके विपरीत वे कर-भुगतान को उचित ठहराएंगे तो देशभक्त और करों के बोझ से दबी जनता को बुरा लगेगा और वे अलोकप्रिय हो जाएँगे।

यीशु उनकी दुष्टता समझ गए। उन्होंने एक रोमन सिक्का माँगा, जो उन्हें दिया गया। यह सिक्का चाँदी का दीनार था, जिस पर तत्कालीन रोमन सम्राट तिबेरिउस् के चित्र के नीचे धर्मप्राण यहूदियों के लिए घृणित शब्द, 'दिव्य कैसर' लिखा था। यहूदियों के धर्म-शास्त्रों का आदेश था, 'किसी प्राणी की आकृति न बनाना, न उसकी सेवा-पूजा करना।' यीशु ने सिक्का दिखाकर पूछा कि उस पर किसका चित्र अंकित है, तो उत्तर मिला 'रोम-सम्राट' का। तब यीशु ने कहा, 'जो रोमन सम्राट का है, वह रोमन सम्राट को दो और जो परमेश्वर का है, वह परमेश्वर को दो।' यह उत्तर सुनकर वे चकित रह गए और अपना-सा मुँह लेकर चले गए।

यीशु का उत्तर कोई व्यापक सिद्धांत या अर्थशास्त्र की नीति नहीं था, जिससे अधिकार के दो क्षेत्र बाँटे जा सकें। पहली बात का अर्थ था, 'सिक्के पर जिसका लेख है, वह उसी का होगा।' दैनिक जीवन में जनता रोमन सरकार द्वारा निर्मित पक्के रास्ते, पुल, नल, स्नानगृह, खेल के मैदान आदि सुविधाओं का उपभोग करती है। अत: सामाजिक व्यवस्था के प्रति मनुष्य का कर्तव्य है कि वह कर चुकाए, जिसे किसी सीमा तक जनता स्वयं औचित्यपूर्ण मानती है। दूसरी बात धार्मिक गहराई में पैठने का निमंत्रण है। सब कुछ ईश्वर के अधिकार में ही है, वही सोने-चाँदी, सभी का स्रष्टा है, इसलिए मनुष्य सदा उसकी प्रेम-योजना के अधीन रहे। इसके बाद यीशु से वार्ता करने के लिए सदूकी आए, जो प्राय: पुरोहिती-कुल के सदस्य थे। उनके परंपरावादी दृष्टिकोण के कारण उन्हें पूँजीपतियों का समर्थन प्राप्त था। सदूकी केवल 'मूसा के पंचग्रंथ' को ही प्रामाणिक मानते थे, जिसमें पुनरुत्थान की शिक्षा नहीं थी। युगांत में होने वाले पुनरुत्थान का स्पष्ट उल्लेख केवल बाइबिल के उत्तरग्रंथों (जैसे दानिएल अध्याय 12) में मिलता है। सदूकियों को पुनरुत्थान की शिक्षा हास्यस्पद लगती थी, क्योंकि वे 'पुनर्जीवित शरीर' को प्राकृतिक संदर्भ में देखते थे। अपनी यही शंका उन्होंने यीशु के सामने रखी। यीशु ने निर्गमन ग्रंथ, जिस पर सदूकियों की आस्था थी, का उल्लेख करते हुए बताया कि व्यक्तिगत नवजीवन (पुनरुत्थान) को मानने के लिए तर्क यह है कि ईश्वर सत्यनिष्ठ है। उसका वचन अमृत है। उसका प्रेम शाश्वत है। यदि मरणशील व्यक्ति उसका प्रेमपात्र कहा गया है, तो मृत्यु के बाद भी जीवन की आशा निश्चित है।

सदूकियों के चले जाने के बाद फरीसियों द्वारा प्रेषित एक धर्माचार्य आए। उन्होंने पूछा, 'व्यवस्था में कौन-सी आज्ञा बड़ी है?' यीशु ने बताया, 'संपूर्ण हृदय, संपूर्ण जीवन और संपूर्ण बुद्धि से ईश्वर को प्यार करना और अपने पड़ोसी को अपने समान प्रेम करना, यही नबियों की शिक्षा का आधार है।'

इसके पश्चात यीशु ने शास्त्रियों और फरीसियों को उनके पाखंड के लिए, स्वयं को 'धर्मगुरु' कहलाने के लिए, प्रजा का शोषण करने के लिए, मंदिरों में अव्यवस्था फैलाने के लिए और उनकी अधार्मिकता के लिए फटकार और प्रजा को उनसे सावधान रहने की चेतावनी दी। यीशु ने अपने 12 'प्रेरित शिष्यों' को भोज पर बुलाया। किसी को नहीं मालूम था कि यीशु के साथ उनका यह अंतिम भोज है। यीशु दरवाजे पर खड़े थे। जो शिष्य आता, वे उसके पैर धोते और अंदर बैठने के लिए कहते। सबसे अंत में जूडास इस्कारियट नामक शिष्य आया। उसके पैर धोने के बाद यीशु ने कहा, 'जूडास! मेरे प्रिय शिष्य, तुम उस आदमी का बलिदान करोगे, जो मुझे कपड़ों की तरह ढके हुए है... तुम ही मुझे शरीर के बंधन से मुक्त करोगे... मेरे अंदर की आत्मा को आज़ादी दोगे। तुम मुझे गिरफ्तार कराओ।'

जूडास ने शंका व्यक्त की, 'प्रभु आपकी इस आज्ञा के पालन से मैं विश्वासघाती कहलाऊँगा। संभव है, भविष्य में 'जूडास' का अर्थ 'विश्वासघाती' मान लिया जाए।' 'हाँ ऐसा ही होगा', यीशु ने शांतचित्त उत्तर दिया। 'क्योंकि मैं पहले ही भविष्यवाणी कर चुका हूँ कि मेरा कोई शिष्य विश्वासघात करेगा।' कालांतर में 'जूडास' का अर्थ 'विश्वासघाती', 'देशद्रोही' मान लिया गया और यह अर्थ आज भी अंग्रेजी शब्दकोशों में प्रचलित है। यह वैसे ही हुआ जैसे अशोक के बौद्ध धर्म स्वीकार कर लेने से क्षुब्ध ब्राह्मणों ने उसकी उपाधि 'प्रियदर्शी' का अर्थ 'मूर्ख' प्रचलित कर दिया था।

जूडास ने अपने लाल बालों पर हाथ फेरते हुए पूछा, 'इस कार्य के लिए आपने मुझे ही क्यों चुना है?' यीशु ने कहा, 'सुनो जूडास, यह सर्वविदित है कि तुम एक कट्टर राष्ट्रवादी हो और मेरे अहिंसक आचरण के स्थान पर मुझे क्रांतिकारी के रूप में देखना चाहते हो। तुम्हें अपने आदर्शों को पूरा करने का यही अवसर है।' यह कहकर यीशु मुड़े और अंदर अन्य शिष्यों के पास जाने लगे।

तभी जूडास ने व्यथित स्वर में कहा, 'महाप्रभु, यहाँ आपको सभी जानते हैं। महापुरोहित आपसे रुष्ट हैं, फिर वे आपको गिरफ्तार क्यों नहीं करवाते?' यीशु ने उत्तर दिया, 'उन्हें मेरे विरुद्ध कोई गवाह नहीं मिल रहा है। तुम ऐसे कम से कम से कम दो गवाह तैयार करोगे, जो मेरे खिलाफ गवाही दे सकें।' इतना कहकर यीशु अंदर चले गए।

अंततः यीशु को जूडास इस्कारियट ने महापुरोहित और धर्मवृद्धों द्वारा भेजे गए लाठियों और तलवारों से लैस लोगों द्वारा पकड़वा दिया। जैसे ही हथियार-बंद लोगों ने यीशु को पकड़ा, उनका प्रिय शिष्य पतरस (पीटर) ने तलवार चलाकर महापुरोहित के दास का कान काट दिया। यीशु ने शिष्य को झिड़का, 'अपनी तलवार रोककर म्यान में रखो, क्योंकि जो तलवार उठाते हैं, वे तलवार से ही मारे जाते हैं।' फिर यीशु ने बंदी बनाने आए लोगों से कहा, 'तुम तलवारें और लाठियाँ लेकर मुझे बंदी बनाने आए हो, जैसे मैं कोई डाकू हूँ। मैंने तुम्हें मंदिर में उपदेश दिए, तुमने तब क्यों नहीं मुझे पकड़ा।' उन लोगों ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया और यीशु को पकड़कर महापुरोहित काइफा के पास ले गए। वहाँ शास्त्री और धर्मवृद्ध भी उपस्थित थे। उन लोगों ने यीशु के विरुद्ध प्रमाण जुटाने का प्रयास किया। परंतु अनेक झूठे गवाहों के बयान के बाद भी उनके विरुद्ध कुछ सिद्ध नहीं हो पाया। अंत में दो मनुष्य (उस समय दो व्यक्तियों की गवाही सच मानी जाती थी) आकर बोले, 'इसने कहा था कि यह परमेश्वर के मंदिर को गिरा सकता है और उसे तीन दिन में फिर बना सकता है।' यह सुनकर यीशु मौन रहे। महापुरोहित ने खड़े होकर यीशु से कहा, 'तू कुछ उत्तर क्यों नहीं देता। देख, ये लोग तेरे विरुद्ध क्या साक्ष्य दे रहे हैं।' परंतु यीशु फिर भी मौन रहे। ईश-सेवक के विषय में यह भविष्यवाणी थी कि वह अपने दुःख-भोग के समय मौन रहकर सारा अपमान सहेगा।

महापुरोहित ने फिर कहा, 'मैं तुझे जीवंत परमेश्वर की शपथ देकर कहता हूँ कि यदि तू परमेश्वर-पुत्र मसीह है तो हमें बता दें।' यीशु बोले, 'आपने ही कह दिया।' महापुरोहित नहीं जानता था कि सच्चा मसीह अपने आपको 'मसीह' उद्घोषित नहीं कर सकता। यीशु ने यहाँ घोषणा अप्रत्यक्ष रूप से महापुरोहित से ही करवाई। यीशु ने आगे कहा, 'मैं आपसे यह भी कहता हूँ कि अब से तुम मानव-पुत्र को सर्वशक्तिमान परमेश्वर के दाहिनी ओर बैठा हुआ और आकाश में बादलों पर चलता हुआ देखोगे।'

इस पर महापुरोहित ने रोष और शोक की प्रतिक्रिया में अपने वस्त्र फाड़ डाले और कहा, 'इसने परमेश्वर की निंदा की है। आप सबने सुन लिया, अब गवाहों की जरूरत नहीं है। इस अपराध के लिए यह प्राण-दंड के योग्य है।' वास्तव में महापुरोहित का निर्णय राजनीतिक अवसरवाद से प्रेरित था। यदि वह यीशु को 'मसीह' के रूप में मान्यता देता, तो रोमन-शासन का क्रोध मोल लेता। नियमानुसार प्रभु-नाम के निंदक को मृत्युदंड मिलना निश्चित था।

दूसरे दिन महापुरोहित ने समाज के धर्मवृद्धों से मंत्रणा की और यीशु को मरवाने का निश्चय किया। परंतु प्राण-दंड देने का अधिकार यहूदी-महासभा को नहीं था। अतः उन्होंने बंदी यीशु को रोमन राज्यपाल पुन्तियुस पिलातुस के सम्मुख पेश किया। महासभा ने उन पर आरोप लगाए, 'यह जनता में विद्रोह फैलाता है, रोम-सम्राट को कर न देने के लिए जनता को भड़काता है और स्वयं को मसीह राजा कहता है।' इस अभियोग की पुष्टि में साक्ष्य प्रस्तुत किए गए।

राज्यपाल ने इस आशय से यीशु की ओर देखा कि वे अपनी सफाई दें। पर यीशु मौन रहे। पिलातुस ने कहा, 'क्या तुम सुन नहीं रहे कि ये लोग तुम्हारे विरुद्ध कितने साक्ष्य दे रहे हैं। अपनी सफाई में तुम्हें क्या कहना है?' यीशु ने कोई उत्तर नहीं दिया, मौन रहे। इस पर राज्यपाल को बड़ा आश्चर्य हुआ। उस समय फसह का पर्व चल रहा था। यह पर्व चैत्र (मार्च-अप्रैल) की पूर्णिमा को समाप्त होता है। इस बीच तीर्थयात्री बड़ी संख्या में यरुशलम के मंदिर में धन्यवाद का बलिदान चढ़ाने आते थे। महीने के दसवें दिन प्रत्येक यहूदी-परिवार एक निष्कलंक मेमना चुन लेता था और उसे चौदहवें दिन दोपहर को मंदिर के प्रांगण में कटवाता था। उसी रात को हर घर में फसह का भोज होता था और मेमने का प्रसाद बेखमीरी रोटी के साथ खाया जाता था। लोग फसह की कथा सुनते थे कि इजराइली पूर्वज किस प्रकार मिश्र की गुलामी से स्वतंत्र हुए थे और मूसा के नेतृत्व में समुद्र पार कर मिश्र से भाग निकले थे।

फसह पर्व के दौरान राज्यपाल, जनता के इच्छानुसार एक सजायाफ्ता कैदी को मुक्त कर देता था। उस समय उग्र राष्ट्रवादियों के समर्थन पर रोमन छावनी पर छापामार हमले करने वाला कुख्यात आतंकवादी बरअब्बा (अर्थात पिता का पुत्र) भी बंदी था। उसका उपनाम 'यीशु' था। लोगों की भीड़ बढ़ रही थी। पुरोहितों के लिए यह आसान था कि शांतिवादी सुधारक यीशु के स्थान पर क्रांतिकारी दल के नेता की जीवन-रक्षा की माँग करने के लिए जनता को उकसाएँ और उन्होंने ऐसा ही किया।

राज्यपाल ने भीड़ से पूछा, 'तुम लोग क्या चाहते हो? बताओ! मैं तुम्हारे कहने पर किसे मुक्त करूँ? यीशु बरअब्बा को या उस यीशु को जो मसीह कहलाता है?' राज्यपाल जानता था कि पुरोहितों ने यीशु को ईर्ष्यावश फँसाया है।

राज्यपाल के प्रश्न के उत्तर में महापुरोहित और धर्मवृद्धों की बातों में फँसी भीड़ ने कहा, 'बरअब्बा को छोड़ दो।' पिलातुस ने पूछा, 'तो फिर यीशु का क्या करूँ, जो मसीह कहलाता है?' 'उसे क्रूस पर चढ़ा दो', भीड़ चिल्लाई। राज्यपाल ने अंतिम प्रयास करते हुए पूछा, 'उसने कौन-सा अपराध किया है?' प्रश्न का उत्तर न देकर, भीड़ और जोर से चिल्लाई, 'उसे क्रूस पर चढ़ाओ।'

वास्तव में राज्यपाल पिलातुस यीशु को कोई दंड नहीं देना चाहता था। जब उसने देखा कि यीशु को बचाने में वह सफल नहीं हो पाएगा, तो अपनी निर्दोषिता सिद्ध करने के लिए उसने लोगों के सामने पानी से हाथ धोते हुए कहा, 'इस मनुष्य की मृत्यु के लिए मैं दोषी नहीं हूँ। तुम्हीं जानो।' लोगों ने कहा, 'इसकी मृत्यु का दोष हम पर और हमारी संतानों पर हो।' इस

प्रकार उन्होंने यीशु की मृत्यु सुनिश्चित करने के लिए उसका उत्तरदायित्व पूरे समाज पर डाल दिया।

जनता की माँग पर पिलातुस ने बरअब्बा को छोड़ दिया और प्रथानुसार यीशु को कोड़े लगवाकर क्रूस पर चढ़ाने के लिए सिपाहियों को सौंप दिया। लोहे और हड्डी के टुकड़ों से जुड़ी रस्सी के कोड़े कैदी को इस कारण मारे जाते थे कि वह अधमरा हो जाए और क्रूस पर अधिक देर तक जीवित न रहे। 'क्रूस' अथवा शूली पर चढ़ाना सबसे क्रूर मृत्युदंड था, जो अधिकारियों द्वारा अधिकृत क्षेत्रों में केवल विद्रोह करने पर गैर-रोमन अपराधियों और गुलामों को दिया जाता था।

रोमन राज्यपाल की अदालती कार्यवाही प्राचीन यरूशलम शहर के मध्य में, मंदिर के पश्चिम में स्थित हस्मोनी महल के सामने हुई थी। सैनिक वहाँ से यीशु को राजभवन ले गए, जहाँ एक सैन्य-दस्ता एकत्र किया गया। वहाँ यीशु के वस्त्र उतारकर उन्हें लाल (कहीं इसे बैंगनी कहा गया है) जामा पहनाया, काँटों का मुकुट बनाकर उनके सिर पर रखा और उनके दाहिने हाथ में नरकुल की संटी थमाई और यीशु के आगे घुटने टेक कर उपहास करने लगे, 'यहूदियों के राजा आपकी जय हो।' तत्पश्चात सैनिकों ने उन पर थूका और वही संटी लेकर उनके सिर पर मारी। यीशु के साथ 'मूर्ख राजा' का खेल खेलने के बाद सैनिकों ने उनका जामा उतार लिया और उनके वस्त्र पहनाकर उन्हें क्रूस पर चढ़ाने को ले चले।

नगर के बाहर जाते समय सिपाहियों को कुरैन देश (उत्तरी अफ्रीका) का शिमौन नामक एक निवासी मिला। उसे बेगार में पकड़कर बाध्य किया कि वह भारी क्रूस की ऊपरी आड़ी को ढोकर ले चले, क्योंकि कोड़ों की मार से बेदम होने के कारण यीशु उसे ठीक से ढो नहीं पा रहे थे। इस प्रकार अफ्रीका, एशिया और यूरोप के लोगों ने इस जुलूस में सम्मिलित होकर इस घटना को एक प्रकार से अंतर्राष्ट्रीय रूप दे दिया।

जब वे गुलगुता (अर्थात कपाल के समान पहाड़ी-स्थल) नामक जगह पर पहुँचे, तब उन्होंने यीशु को पित्त-मिश्रित दाखरस पीने के लिए दिया। उन्होंने चखा तो वे समझ गए कि श्रद्धालु महिलाओं द्वारा भेजा गया यह संवेदनमंदक पेय है, जिससे मृत्यु की पीड़ा कम हो जाती है। किंतु यीशु अचेतन अवस्था में नहीं मरना चाहते थे, क्योंकि ऐसी स्थिति में वे अपने प्रभु का स्मरण नहीं कर पाते। अत: उन्होंने उसे पीने से इनकार कर दिया।

यीशु के सब कपड़े उतार लिए गए, जिन्हें जल्लादों ने बाँट लिया। उन्हें क्रूस पर चढ़ा दिया गया और उनके सिर पर एक तख्ती लटका दी गई, जिस पर लिखा था, 'यह यहूदियों का राजा है।' यीशु के साथ दो डाकू भी क्रूस पर चढ़ाए गए, एक दाहिनी ओर दूसरा बाईं ओर। इससे पूर्व में की गई भविष्यवाणी सिद्ध हो गई कि यीशु अपराधियों के साथ गिने जाएंगे।

उधर से निकलने वाले लोग यीशु की निंदा करते हुए सिर हिला-हिलाकर कह रहे थे, 'हे मंदिर को गिराने वाले और तीन दिन में उसे बनाने वाले अपने को बचा। अगर तू परमेश्वर का पुत्र है तो क्रूस से उतर आ।' वे नहीं जानते थे कि मंदिर को गिराने की बात कहकर उन्होंने उसके विनाश के विषय में चेतावनी दी थी (जो 40 वर्ष बाद ठीक निकली जब सन् 70 में रोमन सेना ने इसे नष्ट कर दिया) और मृत्यु से पुनरुत्थान को उन्होंने अध्यात्मिक मंदिर का नवनिर्माण बताया था।

महापुरोहित, शास्त्री और धर्मवृद्ध उपहास कर रहे थे, 'इसने दूसरों को बचाया पर क्या अपने को नहीं बचा सकता? यह तो इजराइल का राजा है, अब क्रूस से उतरे तो हम भी विश्वास करें।' वे नहीं जानते थे कि बलहीन, तिरस्कृत और ईश्वर द्वारा मानों परित्यक्त यीशु की यह स्थिति उनके लिए सच्चे मसीह का द्योतक है। शास्त्रों में कहा गया था कि ईश्वर का कोई विशेष कृपापात्र, जो पूर्णत: निर्दोष होगा, दु:ख ही सहेगा। क्रूसित 'मानव-पुत्र' में पतित मानवता की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति देखी जा सकती थी।

दोपहर से लेकर तीन बजे तक पूरे देश में अंधकार छाया रहा। यह ईश्वरीय न्याय का प्रतीक था और नई सुबह की आशा। लगभग तीन बजे यीशु ने कीलों की शैय्या, क्रास से उच्च स्वर में पुकारा- 'इलोई, इलोई, लामा सबक्तनी।' (हे मेरे परमेश्वर, हे मेरे परमेश्वर, तूने मुझे क्यों छोड़ दिया)। यीशु की आर्तवाणी सुनकर वहाँ खड़े लोगों ने कहा, 'वह नबी एलियाह को पुकार रहा है।'

उनमें से एक व्यक्ति ने शीघ्रता से स्पंज लिया और उसे सिरके में डुबोकर एक लंबे सरकंडे पर रखकर यीशु को पीने के लिए देने लगा। लोगों ने कहा, 'ठहरो, देखें एलियाह उसे बचाने आता है या नहीं।' तभी शुक्रवार के दिन 7 अप्रैल सन् 30 ई को यीशु ने घोर रव करते हुए अपने प्राण त्याग दिए।

उधर मंदिर का परदा ऊपर से नीचे तक फटकर दो टुकड़े हो गया। इसका अर्थ था कि बलित यीशु महापुरोहित के रूप में परम-पवित्र स्थान में प्रविष्ट हुए और ईश्वरीय अनुग्रह का सिंहासन, अब मंदिर में न रहकर सर्वसाधारण जनता और सभी जातियों के लिए उपगम्य और प्राप्य हो गया। यही था मंदिर का नवनिर्माण। पृथ्वी कांप उठी, चट्टानें तड़क उठीं। एक रोमन सैन्य अधिकारी, जो पहरा देने के लिए यीशु के सामने खड़ा था, इस प्रकार यीशु को प्राण त्यागते देखकर बोला, 'निश्चय ही, वह परमेश्वर का पुत्र था।' रोमन सेनाधिकारी की यह स्वीकारोक्ति यीशु में गैर-यहूदी शिष्यों के विश्वास की प्रतिध्वनि थी।

104-ए/315 रामबाग,
कानपुर-208012
मो:9839164507

कहानी

रिश्ता जो जिया नहीं गया

- श्रीमती मीनाक्षी जिजीविषा -

माँ की आँखों से अविरल अश्रुधारा बह रही थी, उसका हृदय करुण विलाप कर रहा था व हाथ यंत्रवत अटैची में कपड़े डाल रहे थे। अभी कुछ देर पहले ही माँ को यह दुखद, दिल तोड़नेवाली सूचना मिली थी कि उनकी सबसे बड़ी बहन 'लीला देवी' नहीं रहीं, जिन्हें वे ही नहीं, पूरा परिवार ही प्यार से 'लीलो' कहता था। यह हृदय विदारक खबर सुनकर साठ वर्षीय माँ बच्चों सी बिलख पड़ी थी। रो-रो कर उनकी आँखें सूज गई थीं और हम सब भाई बहन समझा-समझा कर थक गये थे। सुबह से दोपहर होने को थी, पर अब तक मुँह में आनाज का एक दाना तक नहीं डाला था। उनकी खाने की थाली ज्यों की त्यों पलंग के पायताने पर रखी थी, हम सब उन्हें अपने-अपने तरीके से दिलासा देने की कोशिश कर रहे थे कि वे सब्र रखें, परमात्मा को शायद यही मंजूर था। जो आया है, उसे एक न एक दिन तो जाना ही है और फिर वे तो पचहत्तर वर्ष की आयु पूरी कर एक हँसता खेलता परपोतों वाला खुशहाल परिवार पीछे छोड़कर गई हैं। फिर रोना क्यों...? यह मातम क्यों...? फिर भी हम सबका समझाना व्यर्थ रहा। न हमारे तर्कों से उनके आँसू रुके और न ही हमारे तसल्ली भरे शब्दों ने उनके 'करुण विलाप' को विराम दिलाया। हाँ! इतना जरूर प्रभाव अवश्य हुआ कि उनका सस्वर विलाप अब 'मौन रुदन' में परिवर्तित हो चुका था।

मीनू, गीतू और संचित समझ नहीं पा रहे थे कि आखिर माँ को कैसे समझाएँ? उन्हें माँ के स्वास्थ्य की भी चिंता थी। माँ को हाई ब्लडप्रेशर की बीमारी थी, इसलिए मीतू को चिंता थी कि दुख व तनाव से कहीं उनकी तबीयत न बिगड़ जाए और उसकी परेशानी उसकी वाणी से मुखर हो ही गई, 'क्या हो गया है माँ...? पचहत्तर बरस की थीं वे', पूरे एक-एक शब्द पर जोर डालते हुए कहा था गीतू ने, 'उन्हें आखिर एक न एक दिन जाना ही था, बस तुम उन्हें अपने साथ रखना चाहती थी...। अरे अपनी जिंदगी जी कर गई हैं वे...।'

'बेटी, पचहत्तर की हो या पिचायान्वे की, बहन तो आखिर बहन ही होती है, और रिश्ता आखिर रिश्ता। रिश्ते घर के कप-प्लेट तो नहीं कि टूट गए तो दुख ही न हो। आखिर मेरी बड़ी बहन थी वह। माँ, जायी माँ की तरह ही उन्होंने लाड़-प्यार दिया, परवरिश की हमारी और यहाँ तक कि हमारी शादियाँ की, अपने ऊपर सारी जिम्मेदारियाँ ली। अरे वह बड़ी बहन नहीं, हमारे लिए तो वह 'बड़ का पेड़' थी, जिसकी छाया में हम सुरक्षित रहे, पले बढ़े। अटूट रिश्ता था हमारा उनका, खून का ही नहीं, भावनात्मक, संवेदनात्मक भी। बहन, माँ, सहेली, मार्गदर्शक...। सभी कुछ तो थी वे हम भाई बहनों के लिए... और... और... आगे के शब्द उनके रुँधे गले में ही अटक गए।' मीतू उनकी ऐसी प्रतिक्रिया से सहम सी गई थी। उसने संचित व गीतू को इशारे से चुप रहने को कहा व माँ के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, 'ठीक है माँ, तुम कल सुबह चली जाना, सीधी बस है वहाँ के लिए। हम तुम्हें बैठा आएँगे बस में।'

'क्या...? कल सुबह...? मैं अपनी माँ समान बहन का मरा मुँह भी न देखूँगी...? उसके आखिरी समय में तो उसके साथ न थी, क्या अब उसके अंतिम दर्शन भी न करूँ...? हे! भगवान...।' और वे जोर-जोर से रोने लगी थी। उनके रोने में उनकी बेबसी झलक रही थी। दरअसल उनके घुटनों में दर्द के कारण वे अकेली कहीं आ-जा नहीं सकती थीं और हम सब बच्चे अपनी-अपनी जिंदगी में इतने व्यस्त थे कि हमारे पास किसी रिश्तेदारी में या किसी के सुख-दुख, ब्याह-शादी में भाग लेने का समय ही नहीं था। हम सब नामी-निरामी बहुराष्ट्रीय कंपनियों में ऊँचे-ऊँचे ओहदों पर जो थे। हमारी जिंदगी 'ऑफिस, कैरियर

उसे 'आत्मग्लानि' हो रही थी कि वे लोग 'कंप्यूटर' पर अनजाने लोगों से तो मैत्री कर स्थान और समय की दूरियाँ लांघते रहे, किंतु अपनों को अनदेखा करते रहे। हाथ में अपने नाम की दान राशि पकड़े हुए वह सोच रही थी कि कितनी अभागी है वह, जिस 'मौसी' ने उसे अंतिम क्षण तक याद रखा, उसे ही वह अपनी झूठी चमक-दमक भरी जिंदगी में महत्वाकांक्षा की उड़ान में मस्त कभी पहचान व महसूस ही नहीं कर सकी। उसने इस आत्मीय रिश्ते को 'जिया' ही नहीं, सहेजा ही नहीं। पैसा, पद, प्रतिष्ठा तो पा ली, किंतु संबंधों की कसौटी पर 'विफल' हो गई। सब कुछ पा कर भी उसकी भोली प्रेम और स्नेह से रिक्त ही रही।

और पर्सनल लाइफ तक ही सीमित थी। 'सोशल लाइफ' क्या चीज' है, हमने कभी जानने की कोशिश ही नहीं की।

मीतू ने माँ की हालत देखते हुए संजू से कहा, 'संजू, तुम्हीं ले जाओ माँ को अपने साथ, तुम गाड़ी भी चला लेते हो, आराम से गाड़ी में चली जाएँगी। माँ के साथ ही तुम भी कल सुबह तक वापस आ जाना। उसने अपनी तरफ से अकाट्य तर्क दिया था। किंतु संजू ने उसके इस 'रामबाण' को अपने 'ब्रह्मास्त्र' से विफल कर दिया था। 'क्या...? मैं ...? तुम्हें पता नहीं कल बॉस के साथ फॉरेन डेलीगेशन आ रहा है, मेरी अर्जेंट मीटिंग है, नहीं गया तो साला अगले महीने होनेवाली मेरी प्रमोशन को 'डिमोशन' में बदल कर रख देगा।' 'गीतू, तुम चली जाओ माँ को लेकर।' 'अरे नहीं..., कल तो मेरी ननद आ रही है मेरे यहाँ, और बच्चों के भी 'मंथली टेस्ट' है, उनकी पढ़ाई का नुकसान होगा। मैं कैसे जा सकती हूँ...?'

'मीनू, तुम्हीं क्यों नहीं ले जाती माँ को...।' दोनों ने एक तीर चलाया था। 'मैं..., मैं..., मीनू कुछ कहने ही वाली थी कि माँ का आहत भरा स्वर उभरा, 'बस करो, तुम सब जाओ अपने-अपने ऑफिस, मैं अकेली ही चली जाऊँगी। तुम लोगों के पास संवेदनाओं और रिश्तों के लिए फुर्सत ही कहाँ है...? तुम्हें तो बस ओहदे चाहिए, अपना 'कैरियर' ही सब कुछ है तुम्हारे लिए...। इंटरनेट पर दो-दो घंटे 'चेट' करते हो, पर अपने परिवार के लिए 'दो मिनट' नहीं हैं। तुम्हारे पास सहेलियों और दोस्तों के लिए खूब समय है, लेकिन 'ममेरी', 'फूफेरी बहनें तुम्हें बोर लगती हैं। जब रिश्तों को जिया ही नहीं तुमने, तो फिर उनका 'अर्थ' और 'दर्द' भी क्या समझोगे तुम...? मेरी बहन थी न ..., मैं ही जाऊँगी, यही तो करती आयी हूँ। अब तक, अकेली ही तो निभाती रही हूँ रिश्तों को। तुम्हारे 'पापा' को अपने परिवारवालों से ही फुर्सत नहीं थी, तुम्हें अपनी पढ़ाई और मौजमस्ती से ही मतलब था और अब..., अब तो महत्वाकांक्षा और स्वार्थ की इस अंधी दौड़ में, रिश्तों का महत्व, धर्म सब कुछ भूल गए हो तुम...।'

'संजू, तुम्हारी यही बड़ी 'मौसी' तुम्हें 'टायफाइड' होने पर अपना घर छोड़ पूरा 'डेढ़ महीना' तुम्हारे सिरहाने बैठी रही थी, अपने बच्चों की भी परवाह नहीं की। और..., और मीनू... इसी मौसी ने अपने परिवार से चोरी छिपे, अपनी सारी जमा-पूँजी निकाल, तुम्हारी इंजीनियरिंग के लिए 'डोनेशन फीस' दी थी, ताकि तुम्हारा भविष्य सँवर जाए। और 'गीतू' इसी ने तो सारी बिरादरी, रिश्तेदारी से लड-झगड़ कर उनकी नाराजगी लेकर, तेरी पसंद के 'विजातीय लड़के' से तेरा ब्याह करवाया था, मैं भी कहाँ मानी थी, मुझे भी तो इसी ने राजी किया था। जिसने तुझे 'घर-संसार' दिया, उसी के लिए तुम्हारे पास समय नहीं। आप... हाँ, तुम लोग याद भी क्यों करोगे अब...?'

'तुम्हारी जिंदगियाँ जो सँवर गईं अब। अब तो तुम बड़े लोग हो गए हो...। तुम्हारी 'पीढ़ी' ने रिश्तों को 'बेमानी' कर दिया है, बस स्वार्थ और स्वार्थ है सब कुछ, चाहे माँ-बाप हो या फिर भाई -बहन..., तुम सब अपनी-अपनी सुविधा और स्वार्थ से जुड़े हो सबसे। आज 'मौसी' के संस्कार पर जाने की फुर्सत नहीं तुम्हें, कल..., कल..., हमारी मृत्यु पर भी..... समय नहीं होगा तुम्हारे पास, ... है ना .....।' माँ के मन का ज्वालामुखी फूट पड़ा था।

'नहीं माँ, ऐसा मत कहो, मैं तुम्हें ले चलूँगी। तुम उठो, पहले हाथ-मुँह धो कर कुछ खा पी लो, फिर चलते हैं।' तीनों भाई बहनों में सबसे छोटी व भावुक 'मीनू' ने माँ की हालत समझते हुए कहा था।

लगभग आधे घंटे बाद ही माँ-बेटी, फरीदाबाद से 'फिरोजपुर झिरका' जानेवाली बस में बैठी थीं। पीछे छूटते दृश्यों

के साथ माँ भी पीछे अतीत में खो गई थी। उनकी स्मृति मंजूषा में बरसों से सहेज कर रखे मोती-मणिक अपनी चमक बिखेरने लगे थे। 'मीनू' तेरी मौसी तुझे बहुत प्यार करती थी, तेरे लिए तेरी पसंद की चीजें, अचार-मुरब्बे, बड़िया संभाल कर रखती थी। खास तेरे लिए बनाती थी मेवेवाली गौ दूध की खीर। पहले तुझे भरपेट खिलाती थी और बच्चों को तो बची-खुची ही मिलती थी। और 'घोड़े' पर बैठनेवाली जिद तो तू... पक्का... आज तक नहीं भूली होगी, पहाड़ी पार के खेत देखने के लिए तू अड़ गई थी, मैं तो 'मौसा' जी के साथ घोड़े पर आगे बैठ खेत देखने जाऊँगी। बेचारी..., समझाती रह गई थी तुझे, यहाँ गाँव में, भले घर की सयानी लड़कियाँ, खुले मुँह सिर, घोड़े पर नहीं बैठतीं। उन्हें ही मनाना पड़ा था तेरे मौसा जी को, और तू राजकुमारी सी घोड़े पर गर्दन अकड़ाए बैठी घूमती रही थी खेतों में।'

माँ अपनी रौ में बोले जा रही थीं..., अनगिनत स्मृतियाँ थीं उनके पास, मौसी से जुड़ी हमारे और अपने बचपन की एक-एक स्मृतियों के रेशमी दुशालों की तहें खोल और सहेज रही थीं वे, मीनू आज पहली बार 'मौसी' के स्नेह और दुलार की ऊष्मा को महसूस कर रही थी। पता ही नहीं चला कब तीन घंटों का सफर तय हो गया था। बस झटके से रुकी तो वे दोनों अतीत से वर्तमान में आई। रिक्शा पर बैठ वे दोनों 'मौसी' के घर पहुँचे। वहाँ मामा-मौसियाँ, ममेरी बहनें, भाई, पूरा खानदान ही पहुँचा हुआ था। सभी की आँखों में आँसुओं का सैलाब था। दुबली-पतली काया कफन में लिपटी, फूलों से सजी अर्थी पर चिर निद्रा में सोई थी। झुर्रियों भरे निष्प्राण चेहरे पर भी प्रेम और संतोष का ओज था।

माँ और मौसियों का रुदन, अर्थी ले जाते देख, एक बार फिर गूँज उठा था। छुटकी मौसी, मँझली मौसी और माँ गले लग कर रो रही थीं। मामा की आँखों में भी आँसुओं की नदी थी। रोते-रोते वे सब थक गए तो वहीं बिछी दरी पर ही बैठ गए और बड़ी मौसी की बातें याद करने लगे, 'छुटकी, याद है तुझे बहन ने तेरे लिए कितनी सुंदर, रंग-बिरंगी चटख सी स्वेटर बनाई थी, मैंने माँगी तो कहने लगी, 'नहीं ये तो मेरी दूध सी गोरी छुट्टो पर ही फबेगा।' और तुझे कितना मान देती थी, तू हम सबमें ज्यादा पढ़ी-लिखी जो थी', दोनों मौसियाँ माँ से कह रही थीं। सबके पास ही 'बड़ी मौसी' से जुड़े अनगिनत किस्से-बातें थीं याद करने के लिए। एक 'मीनू' की ही 'स्मृति मंजूषा' खाली थी, उसके पास कुछ नहीं था। होता भी कैसे..., होश संभालने के बाद से ही वह 'मौसी' के घर आई ही नहीं थी, बल्कि उसने आना ही नहीं चाहा था यहाँ गाँव में। धूल-मिट्टी, गर्मी, ऊँचे-ऊँचे बड़े पत्थरोंवाली ऊबड़ गलियाँ, शौच के डिब्बा लेकर मुँह अंधेरे जंगल जाना पड़ता था, और घूमने के नाम पर 'खेतों के सिवा कुछ न था, न मार्कर न थियेटर, न बाजार। तभी तो हर गर्मी की छुट्टियों में वे सब बच्चे एक सुर में मना कर देते थे, 'माँ तुम्हीं हो आओ न। फिर उन्हें लगता था कि वे अपने उच्चवर्गीय घरानों की साथ पढ़ती-खेलती सहेलियों से क्या कहेंगी..., कि वे छुट्टियों में घूमने किसी 'हिल स्टेशन' नहीं, अपनी मौसी के गाँव गए थे। बस शहर की इसी दिखावे भरी जिंदगी में रचे-बसे, जीते-जीते वे 'मौसी' के निश्चल प्रेम से दूर हो गए थे। और आज 'मौसी' की इस 'अंतिम विदाई' के समय मीनू को महसूस हो रहा था कि वह कितनी खाली है, उसने इस खूबसूरत निस्वार्थ, निर्मल स्नेह भरे रिश्ते को कभी 'जिया' ही नहीं। उसने ही नहीं, उसके भाई-बहनों ने भी कितनी अनमोल चीज खो दी है।

उसे 'आत्मग्लानि' हो रही थी कि वे लोग 'कंप्यूटर' पर अनजाने लोगों से तो मैत्री कर स्थान और समय की दूरियाँ लांघते रहे, किंतु अपनों को अनदेखा करते रहे। हाथ में अपने नाम की दान राशि पकड़े हुए वह सोच रही थी कि कितनी अभागी है वह, जिस 'मौसी' ने उसे अंतिम क्षण तक याद रखा, उसे ही वह अपनी झूठी चमक-दमक भरी जिंदगी में महत्वाकांक्षा की उड़ान में मस्त कभी पहचान व महसूस ही नहीं कर सकी। उसने इस आत्मीय रिश्ते को 'जिया' ही नहीं, सहेजा ही नहीं। पैसा, पद, प्रतिष्ठा तो पा ली, किंतु संबंधों की कसौटी पर 'विफल' हो गई। सब कुछ पा कर भी उसकी भोली प्रेम और स्नेह से रिक्त ही रही।

मीनू को लगा, अगर आज वह यहाँ नहीं आती तो 'आत्मीय रिश्तों' के निर्मल, निश्चल, निस्वार्थ स्नेह से वह सदैव वंचित ही रहती और उसकी आँखों से 'अनजिये रिश्ते' का दर्द आँसू बन कर बह निकला। मन ही मन उसने निर्णय किया और अपने ऑफिस फोन कर कह दिया, 'मैं चार दिन बाद आऊँगी।'

- माधव कुंज
892/10, हाऊसिंग बोर्ड
फरीदाबाद

लेख

राष्ट्रीय चेतना में साहित्य की भूमिका

- डॉ दादूराम शर्मा -

एक भारतीय आत्मा का हृदय पुष्प बनकर पुकार उठा था -

'मुझे तोड़ लेना वनमाली, उस पथ पर देना तुम फेंक।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक।।'

मातृभूमि पर न्योछावर होने की कैसी आत्मसमर्पण और आत्मबलिदान से भरी अनूठी अभिलाषा और कमनीय कामना है इन पंक्तियों में। प्रभो! आप वन्य पुष्पों की माला धारण करने वाले वनमाली हैं न। वे पुष्प आपके हृदय प्रदेश में सुशोभित होते हैं, जो किसी राजाधिराज या रईस के प्रमदवन अथवा उपवन में पुष्पित नहीं हुए, जिनके लता-वृक्षों को किसी मानव ने सींचा नहीं, जिनके सौंदर्य और सौरभ पर कोई रीझा नहीं। पूर्णत: उपेक्षित, पूर्णत: तिरस्कृत इन प्रसूनों को आप ही तो गले लगाते हैं। तो लीजिए मैं भी एक ऐसा सुमन हूँ, जिसने इस पददलित उपेक्षित वनस्थली में जन्म लिया है। किन्तु क्षमा करना भगवान! मैं आज आपके कण्ठहार में गूंथने के लिए भी प्रस्तुत नहीं। आप मुझे तोड़कर उस मार्ग पर फेंक दीजिए, जिसपर मेरी मातृभूमि को परतंत्रता से मुक्त करने के लिए आत्मबलिदान की पवित्र भावना से भरे मेरे अनेक देशभक्त वीर जा रहे हों। मैं उनके पावनतम चरणों में दबकर उस पवित्र चरण धूलि में सनकर अपने अस्तित्व का उत्सर्ग कर देना चहता हूँ और उनके कंटीले-पथरीले पथ को चाहे थोड़ी देर के लिए ही सही, सुखद और सुवासित कर देना चाहता हूँ।

अब भारत माता की परतंत्रता की बेड़ियां कट चुकी हैं, हम स्वतंत्र हो गए तो क्या कवि की ये पंक्तियाँ निर्जीव हो गई, उनका दिव्य संदेश व्यर्थ हो गया? नहीं, कवि की यह कामना प्राचीन होकर भी चिरनवीन है, सामयिक होकर भी सनातन है, मौन होकर भी मुखर है। वीरता हमारे यहाँ युद्ध तक ही सीमित नहीं है। युद्धवीर के अतिरिक्त भी वीर के अनेक भेद होते हैं, यथा दयावीर, दानवीर, धर्मवीर, नीतिवीर आदि। उसी तरह शीश चढ़ाने का अर्थ बलिदान की भावना ही नहीं, समर्पण की भावना भी है। वैदिक कवि का कहना है, 'माता भूमि पुत्रोहम् पृथिव्या:', अर्थात पृथ्वी मेरी माँ है आर मैं उसका पुत्र हूँ।

हमारा शरीर पार्थिव है। पृथ्वी के अन्न, जल, अग्नि और वायु से ही इसका पोषण और संवर्द्धन होता है। जननी का उदर अधिक समय तक हमारा भार वहन नहीं कर सका। हमने जन्म लिया। धरती माता ने हमारे बोझ को संभाला। जननी की गोद में बैठकर कुछ दिनों तक हमने उसका दूध पिया। फिर पूर्णत: मातृभूमि के अन्न-जल पर निर्भर हो गए। कुछ समय बाद माँ की गोद तो छिन गई। वह भी हमारा साथ छोड़कर चली गई। किंतु माँ वसुंधरे! हमें तुम्हारी गोद से कौन छीन सकता है? मौत भी हमें तुम्हारी गोद से अलग नहीं कर सकती। माँ भी अपने मृत पुत्र को निर्ममतापूर्वक अपनी गोद से हटा देती है। फिर भी तुम उसे अपने अंक में भर लेने के लिए प्रस्तुत रहती हो। कितनी विशाल, कितनी अनन्य वत्सलता से भरी गोद है तुम्हारी। हमारा जो भी है, जितना भी है, सब कुछ तो तुम्हारा है। फिर भी क्या हम ऐसा अनुभव कर पाते हैं? यदि कर पाते माँ! तो तुम्हारे पवित्र और भव्य श्रृंगार के लिए अपना सर्वस्व समर्पित न कर देते? किंतु हम तो बिल्कुल कृतघ्न हैं, निरे पशु हैं, जो बड़े होकर अपनी माँ को भी भूल जाते हैं। लेकिन पशु तो मूर्ख है माँ! इसलिए उनका अपराध क्षम्य हो सकता है। फिर पशु प्रवृत्ति प्राकृतिक, अत: सीमित और मर्यादित है, किंतु हम मानवों की प्रवृत्तियाँ तो अप्राकृतिक, अत: असीम और मर्यादाहीन हैं। तुम्हारे शरीर पर हमारी नृशंसताओं ने कितने ही भयंकर जख्म कर डाले हैं। 1857 में अपने पवित्र शोणितामृत से तुम्हारी महान सन्तानों ने इन्हें धोने का प्रयत्न किया था और वे मातृभूमि के प्रति प्रेम की अट्टालिका की नींव की सुदृढ़ शिलाएं बन गई।

तुम्हारी अगणित सन्तानों के बलिदान, त्याग और तप से तुम्हारे शरीर की परतंत्रता के बंधन तो कट गए, किंतु तुम्हारा यह

उधार के चावल पथ्य के काम नहीं आते। जूठी पत्तलें चाटने से पेट नहीं भरता। दूसरों से कुछ लेना बुरा नहीं, लेकिन बदले में कुछ देकर ही लेना चाहिए। तभी वह वस्तु, वह निधि हमारी हो सकती है और कुशल व्यापारी की तरह हम अपनी पैतृक संपत्ति को बढ़ा सकते हैं। उधार के धन पर हमारा क्या अधिकार? पता नहीं साहूकार कब हमसे व्याज सहित वसूल कर ले? पाश्चत्य विचारधाराओं को ग्रहण करना बुरा नहीं, किंतु उस आदान में हमें भी कुछ प्रदान करने का दायित्व निभाना चाहिए और जो लेते हैं, उसे अपनी धरती, अपनी संस्कृति और अपनी परिस्थितियों से समायोजित कर लेना हमारे लिए उचित और गौरवास्पद होगा।

कमनीय कलेवर अत्याचारियों की प्रताड़नाओं से भी अभी तक क्षत-विक्षत है, श्रृंगार विहीन और अर्थनग्न है। पेट भूखा और हृदय प्यासा है। माँ! तुम्हारी सुरक्षा और साजसज्जा का संपूर्ण भार हमें सौंप कर तुम्हारी वे महान सन्तानें अपना सर्वस्व तुम्हारे श्रीचरणों में समर्पित कर चली गईं। किंतु हमने किया क्या? तुम्हारे घावों में मरहम लगाना, तुम्हारे अनलंकृत श्रीविग्रह को सजाना तो दूर रहा, हम स्वयं भूखे बेड़ियों और दुर्दम गिद्धों की तरह तुम्हारे अरक्षित अंगों को नोच-नोच कर खाने लगे। माँ! क्या तुम्हारी इस पवित्र धरती पर कभी हमारी जैसी कृतघ्न और लोलुप संतानें जन्मी हैं?

'वंदेमातरम्' और 'जय हिंद' का त्यागमय, समर्पित उद्घोष आज सत्तामद की हुंकारों, अधिकार की चीत्कारों और आरोप-प्रत्यारोप के कर्कश स्वरों में दब गया। राष्ट्र के लिए बलिदान, त्याग और समर्पण की भावना जगाने वाला साहित्यकार भी मानो आज बेखबर होकर सो गया या मोह-मदिरा पीकर अपने गंतव्य पथ से भटक गया। मातृभूमि की सुरक्षा के पावनतम और महानतम उत्तरदायित्व को वह भूल गया। तभी एक युगचेता कवि का स्वर नेपथ्य में गूँज उठता है-

'योग है सुप्राप्य कर्तव्यबीज-आरोपण
क्षेम की उपेक्षा, निश्चिंतता भीषण प्रमाद।
जरा व्याधि क्षयकारी चिंत्य यह मध्याह्न स्वप्न
ताकते हैं तस्कर मूलोत्पाटी मूशक खल।
माली की असावधानी से
अविकसित कलिका को
कुतरने पर तुले हुए अवसर पा
कीड़े हजार।
जागो फिर एक बार।।'

स्वतंत्रता प्राप्ति से स्वतंत्रता की रक्षा अधिक महत्वपूर्ण है। यह स्वतंत्रता तो हमारे कर्तव्य बीज का निक्षेप मात्र है। इस नव अंकुरित पौधे को अपने श्रम जल से सींच कर और त्याग की खाद से संवर्धित कर हमें राष्ट्रीय समृद्धि की फलवत्ता से युक्त करना है। युगद्रष्टा कवि की पुकार और संदेश यही है।

इस भीड़भरी धकापेल में आज का आम आदमी खुद को निहायत अकेला और असहाय पा रहा है। वह अपने स्वार्थवश 'स्व' के घेरे में बुरी तरह घिर गया है। वह कुंठा, निराशा, अनास्था और दिग्भ्रम से पूर्णत: ग्रसित है। आज का साहित्यकार स्वयं भी एक आदमी होने का दावा करता है। भटकाव और उद्देश्यहीनता के दो चाकों वाली गाड़ी पर सवार होकर वह आम आदमी का सहयात्री हो गया है। किंतु याद रखिए, प्रकृति का, मातृभमि का, समाज का और विश्व का श्रृंगा बासे, मुरझाए, सुगंधहीन फूल निर्जीव विचार कभी नहीं कर सकते। जो हवा के एक जरा से झोंके से वृन्त से टूटकर धूल में मिल जाने वाले हों, वे झंझा के झटकों से स्वयं को बचाकर मानव वाटिका का श्रृंगार भला क्या कर सकेंगे -

'प्रकृति के यौवन का श्रृंगार करेंगे कभी न बासी फूल।
मिलेंगे वे जाकर अतिशीघ्र, आह उत्सुक है उनकी धूल।।'

- प्रसाद 'कामयानी'

एक बार माँ ने अपने सभी गहने उतारे, तिजोरी में रखे। किंतु उसे बंद करना भूल गईं और स्नान करने चली गईं। तिजोरी को पास उसका बच्चा खेल रहा था। इसी बीच मौका पाकर एक अजनबी भीतर घुस आया। उसने बच्चे को चमकीले खिलौने और बिस्कुट दिये। वह खुशी-खुशी उन्हें दिखाने के लिए अपनी माँ के पास दौड़ा। सद्य: स्नाता माँ अपने संस्कृत केशों को सँवारती हुई पुलकित होकर प्रभु का स्मरण कर रही थी कि बच्चे के हाथ के खिलौनों ने उसे चौंका दिया। वह झटपट उस कमरे में आई, किंतु वहाँ कोई नहीं था। माँ की दृष्टि तिजोरी पर पड़ी। वह खुली हुई खाली पड़ी थी। वह लुट चुकी थी, बिलख रही थी और बालक एक ओर निश्चिंत बैठकर खिलैनों के साथ खेलता हुआ बिस्कुट खा रहा था। वह मन ही मन खुश हो रहा था और बीच-बीच में विस्मित सा रोती हुई माँ को देख रहा था। बस हमारी भी यही स्थिति है। हमारी माँ के समस्त अलंकरण, हमारी संपूर्ण सांस्कृतिक निधियाँ लुट रही हैं और हम पश्चिमी चमक-दमक के खिलौनों और भोगवाद के बिस्कुटों में मस्त हैं।

दूसरों की अटारी को देखकर अपनी फूस की झोंपड़ी को फूँक देने वाले फकीर की तरह हमें आने वाली ठिठुरती काली रात की खबर ही नहीं है। याद रखिए, स्वाधीनता की इमारत बलिदान

की नींव तथा त्याग, श्रम, सेवाभाव और वीरता की दीवारों पर खड़ी होती है। समर्पण की भावना उसकी छत है। इन गुणों को त्यागकर हम इसे अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रख सकेंगे। सुविधाजीवी सत्तालोलुपों ने सत्य, अहिंसा पर आधृत सत्याग्रह आंदोलन को ही स्वतंत्रता प्राप्ति का एकमात्र साधन घोषित कर स्वधीनता के इतिहास को ही झुठला दिया और ये गुण भी उनके वाग्विलास के साधन मात्र बनकर रह गये। गांधी की तरह कौन नेता लंगोटी लगाकर दरिद्रनारायण का सच्चा सेवक बना? शहीदों का मौन बलिदान उनके वागाडम्बर में दब गया। तभी तो कविवर 'सरल' इन विस्मृत, किंतु अमर शहीदों के चारण बन प्रत्येक चौराहे पर खड़े होकर हम भारतीयों से पूछ रहें है।

'पूजे न शहीद गये तो फिर यह पंथ कौन अपनायेगा?
तोपों के मुँह से कौन अकड़ अपनी छातियाँ अड़ायेगा?
चूमेगा फंदे कौन वक्ष पर, कौन गोलियाँ खायेगा?
फिर कौन मौत की छाया में जीवन के रास रचायेगा?
पूजे न शहीद गये तो फिर आजादी कौन बचायेगा?
फिर कौन मौत की छाया में जीवन के रास रचायेगा?
पूजे न शहीद गये तो फिर वह बीज कहाँ से आयेगा?
धरती को माँ कहकर मिट्टी माथे से कौन लगायेगा?
मैं चौराहे-चौराहे पर ये प्रश्न उठाया करता हूँ।
मै अमर शहीदों का चारण उनके यश गाया करता हूँ।
जो कर्ज राष्ट्र ने खाया है, मैं उसे चुकाया करता हूँ।।'

उधार के चावल पथ्य के काम नहीं आते। जूठी पत्तलें चाटने से पेट नहीं भरता। दूसरों से कुछ लेना बुरा नहीं, लेकिन बदले में कुछ देकर ही लेना चाहिए। तभी वह वस्तु, वह निधि हमारी हो सकती है और कुशल व्यापारी की तरह हम अपनी पैतृक संपत्ति को बढ़ा सकते हैं। उधार के धन पर हमारा क्या अधिकार? पता नहीं साहूकार कब हमसे व्याज सहित वसूल कर ले? पाश्चत्य विचारधाराओं को ग्रहण करना बुरा नहीं, किंतु उस आदान में हमें भी कुछ प्रदान करने का दायित्व निभाना चाहिए और जो लेते हैं, उसे अपनी धरती, अपनी संस्कृति और अपनी परिस्थितियों से समायोजित कर लेना हमारे लिए उचित और गौरवास्पद होगा। छायावाद, रहस्यवाद, स्वच्छंदतावाद और कुछ अंशों में प्रगतिवाद में यह विदेशी विचारधाराओं का आदान उनका स्वदेशीकरण करके ही हुआ है। किंतु आज?

वितत, स्फीत, गंभीर और नैसर्गिक साहित्यधारा को सिद्धांतों के बांध से रोकने के पक्ष में हम नहीं हैं और न ही वह इस तरह रोकी जा सकती है। किंतु मर्यादा का बांध, उसके विनाशक और अवांछनीय उद्दाम प्रवाह को रोकने के लिए आवश्यक है, जहाँ से मानवों के हृदय क्षेत्रों को सींचकर उन्हें भव्य भावनाओं के शस्यों से हरा-भरा कर देने वाली विचार प्रणालिकाएँ निकल सकें-

'कीरति भनिति भूति भलि सोई।
सुरसरि सम सब कहं हित होई।।'

हमारा यश, हमारा साहित्य, हमारा ऐश्वर्य सब कुछ जब सच्चे समर्पण भाव से माँ के श्रीचरणों में समर्पित होगा, तभी यह भारत, भारत बन सकेगा।

स्वातंत्र्योत्तर काल में अराजकता का ऐसा अंधड़ जाग पड़ा, जिसमें हमारे राष्ट्रप्रेम, समष्टिबोध, कर्तव्यभावना, व्यापक उदार दृष्टिकोण सब कुछ उड़े जा रहे हैं और बच गया है केवल अधिकार भावना का बीभत्स, विकृत स्वरूप। जिधर देखो उधर अपनी माँगों को लेकर हड़ताल, प्रदर्शन, जुलूस, तोड़-फोड़ और अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिये पृथकतावादी नीति, अड़ंगेबाजी, दोष-दर्शन, दोषारोपण, कालाबाजारी और रिश्वतखोरी। आज सभी चिल्ला रहे हैं कि 'हमें यह चाहिए, वह चाहिए' और 'हमारा कर्तव्य क्या है', इसकी किसी को परवाह ही नहीं है। मानो अधिकारों की माँग करना ही हमारा एकमेव कर्तव्य है। ऐसी विषम राष्ट्रीय परिस्थितियों में यदि साहित्यकार अपराध साहित्य, अश्लील-बाजारू उपन्यास, दिशाहीन कहानियाँ उद्देश्यहीन नाटक और वादी कविताएँ लिखने में मस्त रहकर हमारी महती सांस्कृतिक परंपराओं को तिलांजलि दे राष्ट्र की माँग को ठुकराकर राष्ट्रीय प्रमाद, उन्माद, निर्वीर्यता और कापुरुषता की अभिवृद्धि में चार चाँद लगा रहे हैं तो यह राष्ट्र के लिये बड़ी ही घातक और दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है।

आज हमारा राष्ट्रोद्यान ऐसे सुरभित सुमनों की प्रतीक्षा में हैं, जो अपनी सुषमा से जन-मन को आकृष्ट, सौरभ से दिग्दिगंत को सुवासित और फलवत्ता से जनाचार को संपुष्ट करने में स्वयं को समर्पित कर सकें, तो राष्ट्रीय चेतना का सम्यक विकास संभव होगा और साहित्य का उसमें योगदान महान, पावनतम और अविस्मरणीय होगा। अन्यथा अपनी हठधर्मिता से साहित्य समृद्धि और नवीनता के नाम पर करते हैं अंधाधुंध सामयिक साहित्य का सृजन, तो आनेवाली पीढ़ियाँ उसे अपने सिर पर नहीं रखेंगी और आपकी स्मृति भी निर्ममतापूर्वक विस्मृति की कब्र में दफना दी जाएगी।

- महाराज बाग
भैरवगंज
सिवनी (मध्यप्रदेश)-480661
मोबाइल: +91 8878980467

कविता

कविताएँ

- डॉ जय शंकर शुक्ल -

मैं हिंदी हूँ

पहचानो मुझको मेरे प्यारों,
कैसी रंग-बिरंगी हूँ।
भाल पे चमकूँ भारत माँ के,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।1।।

मात्राओं की छटा विराजे,
स्वर की मैं अरधंगी हूँ।
शिख को चूम नखों तक जाऊँ,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।2।।

तैंतीस व्यंजन चमक रहे,
निज आभा से पूर्ण अंगी हूँ।
भाव भूमि में दमक रही,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।3।।

वर्गों में क, च, ट, त, प
धारण कर पचरंगी हूँ।
य, र, ल, व, श, ष, स, ह
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।4।।

संयुक्ताक्षर क्ष, त्र, ज्ञ से
बना व्योम त्रिरंगी हूँ।
घट में व्यापे आधे अक्षर,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।5।।

इंद्र धनुष सा 'र' को देखो,
अर्थों में इकरंगी है।
लगने से पहले हैं पढ़ते,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।6।।

ढ, ड के अनुबंधों पर,
मैं बनी हुई दो रंगी हूँ।
अनुनासिक सब बिंदी से भी,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।7।।

श, ष, स के व्यवहारों से,
बनी हुई मैं चंगी हूँ।
भूल को लेकर भाव बिगड़ते,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।8।।

अनुस्वार व विसर्ग दो हैं,
आत्मा एक, तरंगी हूँ।
दोनों बोल के देखो,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।9।।

स्वर को धारूँ हृदय पटल पर,
मात्रा कटि में सुरअंगी हूँ।
ऋ के अनुपम रूप देख लो,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।10।।

व्यंजन स्वर को एक साथ कर,
शब्द बने चतुरंगी हूँ।
लिखे वही जो बोल रहे हम,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।11।।

देवनागरी लिपि है मेरी,
मैं इसी रूपांगी हूँ।
बायें से दायें को चलती,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।12।।

ऋषियों की मेधा से बहकर,
निकली मैं चित अंगी है।
रतंगों में विज्ञान भरा है,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।13।।

ओउम् शब्द का रूप बताऊँ,
मैं ऐसी ब्रह्मांगी हूँ।
ज्ञात विश्व में नहीं है कोई,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।14।।

देश-काल की सीमाओं को,
तोड़ चुकी मैं संगी हूँ।
हृदय जोड़ दूँ अपने बल से,
ऐसी में नवरंगी हूँ।।15।।

तद्भव, तत्सम, देशज मेरे,
मैं इनकी जन्मांगी हूँ।
गद्य-पद्य में भाव बहाऊँ,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।16।।

वर्ण-मात्रा भेद बने दो,
छंदों के छंदांगी हूँ।
शब्द प्रवाह मोह लेते हैं,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।17।।

सौ से अधिक बोलियाँ मेरी,
फिर भी मैं इकरंगी हूँ।
वाणी से भावों को बाँटूं,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।18।।

कविता

सूचना-विधा के आयामों को,
पूरा कर पूर्णांगी हूँ।
इंटरनेट पर धूम मचाऊँ,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।19।।

राज-काल के हेतु लिया,
मुझको मैं ऐसी बंदी हूँ।
जान लो मुझको मेरे प्यारों,
ऐसी मैं नवरंगी हूँ।।20।।

ज्ञान-दीप

मानवता की उपासना ही हमारा धर्म है,
शास्त्र और आचार का एक यही मर्म है।

नैनों में स्नेह की धारा उमड़ती रहे,
प्रेम के भावों से वाणी यूँ सजती रहे,
दीन-दु:खी वंचितों की पीड़ा सुनकर
राह उन्नति के बनाना हमारा कर्म है।

कर उठे तो असहायों की आन के लिए,
पग बढ़े तो निर्बलों के सम्मान के लिए,
विपन्नता की कालिमा सदा के लिए दूर हो
रवि की रश्मियाँ सजाना हमारा कर्म है।

युगों से धरा पर अज्ञानता भरी हुई,
ज्ञान के आलोक हेतु वसुंधरा विकल हुई,
रचना व सर्जना के उद्यम को लेकर,
ज्ञान का दीपक जलाना हमारा कर्म है।

हमारे नहीं हैं

ये शब्दों की गरिमा
ये भावों की बानी
किसी के लिए हों
हमारे नहीं हैं।
ये सुर ताल के साथ
लय की कहानी
किसी के लिए हो
हमारे नहीं हैं।

हमीं से हमारी विधा को सराहो
न छल छद्म दुनिया के देखो न समझो
कभी आपके काम आएंगे हम - भी
अभी आज मेरी गजल में न उलझो।

ये अंदाज सुन्दर
ये बेहतर रवानी
किसी के लिए हों
हमारे नहीं हैं।

हमारी नजर आपके आरजू को
सराहे संभाले इसी अंजुमन में
न दरकार रखें, न खोएँ इसे हम
बहारें भरी हैं, हमारे चमन में

ये सुन्दर चमन
ये वियाबान निर्झर
किसी के लिए हों
हमारे नहीं हैं।

रागों बहारों की बहती नदी में
मचलता सरकता रहा रेत-सा मैं
कभी इन्द्र-धनुषी सबल कल्पना में
रहा लहलहाता सदा खेत-सा मैं

ये गीतों की बगिया
ये पनघट की लाली
किसी के लिए हों
हमारे नहीं हैं।

भास्कर के रूप

भास्कर तुम गगन के शूर हो,
जगत में तुमसे निराला कुछ नहीं है।

भोर की मधुरिम छटा से,
अरुण की शुचि लालिमा से,
धरा की शोभा निखारो तुम सदा,
बिन तुम्हारे निशा की यात्रा नहीं है।

प्रात की बेला सजाकर,
साहसी हमको बनाकर,
कर्म से तुम जोड़ते हमको रहे हो,
आलसी तुमको कभी भाता नहीं है।

तप्त दोपहरी के नायक तुम बने हो,
लोक ही पीड़ा के दायक तुम बने हो,
सुबह सा शीतल कहाँ है रूप तेरा,
समय से तेरा सहज नाता नहीं है।

शाम सिंदूरी तुम्हारी कृपा से है,
थके जीवों को तुम्हारा आसरा है।
तुम न जाओ जगत से तो,
रात की मनुहार तो होना नहीं है।

- कवि एवं साहित्यकार
भवन सं.49, पथ सं.06
बैंक कालोनी, नई दिल्ली-110093

कार्य-कलाप

राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड, विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र में राजभाषा के प्रभावी कार्यान्वयन की दिशा में अक्तूबर से दिसंबर, 2013 के दौरान विवि भाग लिया। इन कार्यक्रमों की एक झाँकी नीचे प्रस्तुत है।

अखिल भारतीय राजभाषा संगोष्ठी में भागीदारी

देहरादून के भारतीय राजभाषा विकास संस्थान द्वारा 16 से 18 अक्टूबर, 2013 के दौरान मदुरै में अखिल भारतीय राजभाषा संगोष्ठी आयोजित की गयी। इसमें राजभाषा नीति की व्यावहारिकता, कार्यान्वयन की स्थिति, कार्यान्वयन के दौरान आनेवाली कठिनाइयों व उनके समाधान आदि के संबंध में विचार-विमर्श किया गया। कार्यक्रम में विविध विश्वविद्यालयों के हिंदी विद्वान, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा-मदुरै शाखा के हिंदी प्राचार्य एवं प्रचारक उपस्थित थे। सभी ने प्रतिभागियों को राजभाषा हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने हेतु उपयुक्त सुझाव व मार्गदर्शन दिये। राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड-विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र से सहायक महा प्रबंधक (विपणन) श्री ललन कुमार एवं सहायक प्रबंधक (हिंदी) श्रीमती वी सुगुणा प्रतिनिधियों के रूप में इस कार्यक्रम में उपस्थित थे। संगोष्ठी के तकनीकी प्रस्तुतीकरण सत्र में श्री ललन कुमार ने आर आई एन एल में इस्पात उत्पादन प्रक्रिया के संदर्भ में एक प्रस्तुतीकरण दिया और श्रीमती सुगुणा ने आर आई एन एल में पर्यावरण प्रबंधन से संबंधित एक प्रस्तुतीकरण दिया।

संगोष्ठी के समापन कार्यक्रम में मदुरै कामराज विश्वविद्यालय के संस्कृत भाषा के प्राचार्य मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। राजभाषा हिंदी के प्रभावी कार्यान्वयन हेतु आर आई एन एल की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष एवं अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री ए पी चौधरी को 'राजभाषा श्री सम्मान' एवं सहायक महा प्रबंधक (विपणन) श्री ललन कुमार को त्रैमासिक गृह-पत्रिका 'सुगंध' के कुशल संपादन हेतु 'राजभाषा दीप्ति सम्मान' प्रदान किये गये। श्री ललन कुमार ने उपरोक्त दोनों पुरस्कार ग्रहण किये। साथ ही कार्यक्रम में बेहतर प्रस्तुतीकरण हेतु श्री ललन कुमार एवं श्रीमती सुगुणा को प्रतीक चिह्न प्रदान किये गये।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा श्रीमती वी सुगुणा सम्मानित

मंडल रेल प्रबंधक एवं नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष श्री अनिल कुमार की अध्यक्षता में 30 अक्टूबर, 2013 को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक संपन्न हुई। इसमें विशाखपट्टणम के विविध संगठनों में राजभाषा हिंदी के प्रयोग की समीक्षा की गयी और सुधार हेतु उपयुक्त मार्गदर्शन दिया गया। समिति की गतिविधियों में प्रतिभागियों की सक्रिय भागीदारी को सुनिश्चित करते हुए आगामी छः महीनों के लिए विविध कार्यक्रमों के आयोजन का निर्णय लिया गया। कार्यक्रम में 'बाबा नागार्जुन और उनकी सामाजिक चेतना' लेख हेतु राष्ट्रपति पुरस्कार की प्राप्ति के उपलक्ष्य में श्रीमती वी सुगुणा को सम्मानित किया गया। बैठक में आर आई एन एल की तरफ से प्रबंधक (हिंदी) श्रीमती जे रमादेवी, सहायक कार्यपालक (हिंदी) श्री एम बी पडाल और वरिष्ठ सहायक (अनुवाद) श्री गोपाल उपस्थित थे।

महिलाओं के लिए अगनंपूडि में हिंदी कक्षाओं का उद्घाटन

अगनंपूडि के सामुदायिक कल्याण केंद्र में 11 नवंबर, 2013 को महिलाओं के लिए हिंदी कक्षाओं का उद्घाटन किया गया। हिंदी कक्ष के प्रबंधक (हिंदी) श्रीमती जे रमादेवी ने कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए उपस्थित महिलाओं को आर आई एन एल के प्रबंधन के इस पहल का फायदा उठाने की सलाह दी। इस अवसर पर अगनंपूडि के सामुदायिक कल्याण केंद्र समिति के अध्यक्ष एवं सहायक महा प्रबंधक (सतर्कता) श्री एम जयराजु, सचिव श्री नीलकंठम, श्रमिक संघों के प्रतिनिधि श्री बलिरेड्डी सत्यनारायण, श्री नरसिंग राव, श्री आर एस राजु, श्री जी सोमन्ना, समिति के अन्य सदस्य, हिंदी कक्ष के सहायक कार्य

विध कार्यक्रम आयोजित किये गये। इनमें मुख्यालय के साथ-साथ संगठन के क्षेत्रीय व शाखा कार्यालयों के कर्मचारियों ने भी अत्यंत उत्साह के साथ

पालक श्री एम बी पडाल, कनिष्ठ सहायक (हिंदी) डॉ जे के एन नाथन, कार्मिक विभाग के कल्याण अनुभाग के प्रतिनिधि और बड़ी संख्या में स्थानीय लोग उपस्थित थे।

खम्मम में संभागीय खान सुरक्षा सप्ताह समारोह

खान सुरक्षा निदेशालय के तत्वावधान में राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड द्वारा खम्मम में **17** नवंबर, **2013** को संभागीय खान सुरक्षा सप्ताह समारोह का समापन कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस अवसर पर हिंदी कक्ष द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किया गया, जिसमें मुख्यालय के विभिन्न विभागों में कार्यरत **12** कर्मचारी कलाकारों ने भाग लिया। कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण गीत-संगीत, नृत्य व मिमिक्री आदि थे। प्रतिभागियों ने हिंदी व तेलुगु फिल्मी गीतों व नृत्य से दर्शकों को मंत्रमुग्ध किया। कार्य क्रम का संचालन वरिष्ठ सहायक (अनुवाद) श्री गोपाल ने किया।

कोलकाता व भुबनेश्वर स्थित कार्यालयों में हिंदी दिवस समारोह

आर आई एन एल के कोलकाता स्थित क्षेत्रीय/शाखा/संपर्क कार्यालयों में **26-27** नवंबर, **2013** को हिंदी दिवस समारोह कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस अवसर पर मुख्यालय के हिंदी कक्ष से कनिष्ठ सहायक (हिंदी) डॉ जे के एन नाथन कोलकाता गये और वहाँ कर्मचारियों के लिए हिंदी में विविध प्रतियोगिताएँ आयोजित कीं। उन्होंने इस अवसर पर सभी कर्मचारियों को हिंदी के प्रयोग के महत्व संबंधी एक प्रस्तुतीकरण दिया और उनके विविध संदेहों का निवारण किया। साथ ही उन्होंने कोलकाता कार्यालय में हिंदी के प्रयोग का जायजा लिया। **27** नवंबर को आयोजित समापन समारोह में कोलकाता के हिंदी शिक्षण योजना कार्यालय के अनुसंधान अधिकारी (कार्यान्वयन) श्री निर्मल कुमार दुबे मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। उन्होंने हिंदी के प्रयोग पर बल देते हुए आर आई एन एल में हिंदी कार्यान्वयन के प्रति संतुष्टि व्यक्त की। क्षेत्रीय प्रबंधक (पूर्व) श्री पी ईश्वरय्या ने हिंदी कक्ष के प्रयासों एवं परिणामस्वरूप प्राप्त पुरस्कारों का उल्लेख करते हुए इस दिशा में सभी कर्मचारियों से सहयोग की अपील की। कार्यक्रम में प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किये गये। सहायक प्रबंधक (स्टॉफ) श्री सलिल कुमार सहाय ने कार्यक्रम का संचालन किया। भुबनेश्वर स्थित शाखा कार्यालय में **28-29** अक्टूबर, **2013** को हिंदी दिवस समारोह मनाया गया। कर्मचारियों ने बहुत ही उत्साह के साथ कार्यक्रम में भाग लिया। कार्य क्रम में वरिष्ठ शाखा प्रबंधक श्रीमती वंदना मित्रा, हिंदी समन्वयक एवं वरिष्ठ सहायक (विपणन) श्री सुनील कुमार मिश्रा, कनिष्ठ सहायक (हिंदी) डॉ जे के एन नाथन और भुबनेश्वर कार्यालय के शेष कर्मचारी उपस्थित थे। इस अवसर पर भुबनेश्वर कार्या लय में हिंदी के प्रयोग का निरीक्षण किया गया और सुधार हेतु उपयुक्त सुझाव दिये गये।

हिंदी कार्यशाला संपन्न

संगठन में हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण व विकास केंद्र में **10** से **12** दिसंबर, **2013** तक हिंदी कार्यशाला आयोजित की गयी। इसमें संयंत्र के विविध विभागों से **38** कर्मचारियों ने भाग लिया। कार्यक्रम में प्रतिभागियों को भारत सरकार की राजभाषा नीति, हिंदी भाषा के व्याकरण, लिंग की समस्या व समाधान, अनुवाद की समस्या व समाधान, पत्राचार में हिंदी के प्रयोग, नेमी कार्यालय टिप्पणियों, वित्तीय मामलों में हिंदी के प्रयोग की जानकारी दी गयी। कार्यक्रम में हिंदी कक्ष के कर्मचारियों के अलावा विशाखपट्टणम के हिंदी शिक्षण योजना कार्यालय के विविध प्राध्यापकों ने वक्तव्य दिया। **12** दिसंबर को शाम के **4.00** बजे आयोजित समापन समारोह में उप महा प्रबंधक (मानव संसाधन विकास) श्री एस जगनाथन मुख्य अतिथि थे। उन्होंने हिंदी सीखने के प्रति कर्मचारियों के उत्साह की सराहना और उनसे अपने दैनिक कार्य में हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने की अपील की। प्रबंधक (हिंदी) श्रीमती जे रमादेवी ने संगठन को हिंदी के सफल कार्यान्वयन के लिए राष्ट्रीय स्तर के विविध शील्ड एवं पुरस्कारों की प्राप्ति में प्रबंधन एवं कर्मचारियों के सहयोग हेतु धन्यवाद ज्ञापित किया। कार्यक्रम का संचालन सहायक प्रबंधक (हिंदी)

मानक

संगीत सरिता

(की-बोर्ड सीखने की प्रविधि)

'संगीत सरिता' के इस अंक में 'आशिकी-2' फिल्म से राग 'दरबारी' आधारित गीत 'तुम ही हो...' का नोटेशन दिया जा रहा है। इस राग में 'ग', 'ध' और 'नि' कोमल स्वर तथा 'रे' 'म' शुद्ध लगते हैं। गायन समय मध्यरात्रि है और इस राग की प्रकृति गंभीर है। ऐसा कहा जाता है कि यह राग 'तानसेन' बनाकर प्रचार में लाया। इसके आरोह-अवरोह इस प्रकार हैं :

आरोह : सा रे ग, रे सा, म प ध नी सां

अवरोह : सां ध नी प, म प, ग म रे सा

पकड़ : सा रे ग, म रे सा, ध नी सा

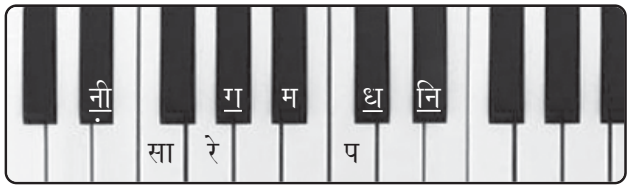

पा सां नि नि ध ध प म ग म ध प प पा मा म ग मा म ग रे ग रे सा नि सा
हम तेरे बिन अब रह नहीं सकते तेरे बिना क्या वजूद मेरा
प प सां नि नि ध ध प म ग म ध प प पा मा म ग मा म ग रे ग रे सा नि सा
तुझसे जुदा गर हो जायेंगे तो खुद से ही हो जायेंगे जुदा
ग म पो म ग मा ग म पा म ग मा रे म गा रे ग रे सा नि सा
क्योंकि तुम ही हो अब तुम ही हो जिंदगी अब तुम ही हो
पा म ग मा ग म पा म ग मा रे रे रे म गा रे ग रे सा नि सा
चैन भी मेरा दर्द भी मेरी आशिकी अब तुम ही हो
पा सां नि नि ध ध प म ग म ध प प पा मा म ग मा म ग रे ग रे सा नि सा
तेरा मेरा रिश्ता है कैसा इक पल दूर गँवारा नहीं
पा सां नि नि ध ध प म ग म ध प प पा मा म ग मा म ग रे ग रे सा नि सा
तेरे लिये हर रोज हैं जीते तुझको दिया मेरा वक्त सभी
नि स स रे रे स रे रे ध ध प प म पा प सं नि सं सं प प म म ग म ग रे
कोई लम्हा मेरा न हो तेरे बिना हर साँस पे नाम तेरा
ग म पा म ग मा ग म प नि ध प म ग मा रे म गा रे ग रे सा नि सा
क्योंकि तुम ही हो अब तुम ही हो जिंदगी अब तुम ही हो
रे ग मा पा म ग मा ग म प नि ध प म ग मा रे रे रे म गा रे स रे सा नि सा
ओ... चैन भी मेरा दर्द भी मेरी आशिकी अब तुम ही हो
प ध नि सां... नि सं रें रें...
तुम ही हो ..... तुम ही हो .....
सं सं नि नि सां सं रें रें नि नि पा प प ध ध सां सं रे रे नि नि पा
तेरे लिये ही जिया मैं खुद को जो यूँ दे दिया है
ध ध प ध ध नी ध प म म म प ध पा ध ध प ध ध नी ध प म म म प ध पा
तेरी वफा ने मुझको संभाला सारे गमों को दिल से निकाला
नि स स रे रे स रे रे ध ध प प म पा प सं नि सं सं प प म म ग म गा रे ...
तेरे साथ मेरा है नसीब जुड़ा तुझे पाके अधूरा न रहा हूँ .....
ग म पा म ग मा ग म प नि ध प म ग मा रे म गा रे ग रे सा नि सा
क्योंकि तुम ही हो अब तुम ही हो जिंदगी अब तुम ही हो
रे ग मा... पा म ग मा ग म प नि ध प म ग मा रे रे रे म गा रे स रे स नि सा
ओ... चैन भी मेरा दर्द भी मेरी आशिकी अब तुम ही हो

इस गाने के राग एवं स्वरों की जानकारी सी आर जी (रीफ़ैक्टरी) विभाग के सहायक महा प्रबंधक श्री रविदास एस गोने और नोटेशन एसेंट कालेज के सीनियर इंटर की छात्रा सुश्री वी नंदिता ने दिया है।

लेख

अकुलाहट को स्वर देता जनकवि-मुक्तिबोध

जन्म दिवस विशेष

- श्री सुरेंद्र अग्निहोत्री -

'कोशिश कर कुछ ऐसा कहने की,
जिससे क्षितिज हो सके और अधिक विस्तृत,
जिससे हृदय हो सके और अधिक आलोकित।।'

पीमेन पांचे को की ये काव्य पंक्तियाँ गजानन माधव मुक्तिबोध के रचनाकर्म पर सटीक बैठती हैं। गजानन माधव मुक्तिबोध का जन्म 13 नवंबर, 1917 को मध्य प्रदेश के श्योपुर जिले में हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा उज्जैन में हुई। मुक्तिबोध के पिता पुलिस विभाग में इंस्पेक्टर थे। उनका तबादला प्राय: होता रहता था। इसलिए गजानन माधव मुक्तिबोध की पढ़ाई में बाधा पड़ती रहती थी। सन् 1930 में मुक्तिबोध ने मिडिल की परीक्षा उज्जैन में दी और वह फेल हो गए थे। इस असफलता को मुक्तिबोध ने अपने जीवन की महत्वपूर्ण घटना के रूप में लिया। सन् 1932 में इंदौर के होलकर कालेज से उन्होंने बी.ए. की परीक्षा पास कर उज्जैन के माडर्न स्कूल में शिक्षक की नौकरी कर ली। उज्जैन में ही उन्होंने भारी विरोधों के बावजूद अपनी पसंद की युवती शांताजी से 1933 में प्रेम विवाह कर लिया।

1940 में उज्जैन की नौकरी छोड़कर शुजालपुर के शारदा शिक्षा सदन में शिक्षक बन गए। यहाँ मुक्तिबोध की मुलाकात जाने माने साहित्यकार प्रभाकर माचवे तथा नेमिचंद जैन से हुई। वर्ष 1943 में अज्ञेय के संपादन में 'तार सप्तक' का प्रकाशन हो रहा था। 'तार साप्तक' में अज्ञेय, मुक्तिबोध, नेमिचंद जैन, प्रभाकर माचवे की कविताएँ संकलित की गयीं। मुक्तिबोध की कविताएँ एक नया बिंब और आकार लेने लगी थीं। नामवर सिंह ने नई कविता का विश्लेषण करते हुए 'कविता के नए प्रतिमान' नामक पुस्तक की रचना की तो उसमें उन्होंने 'प्रयोगवाद' पर भी विस्तार से विचार किया है।

हर दौर की कविता अपनी नूतनता या नवाचार के कारण अलग से पहचानी जाती है। प्रयोगवाद, छायावाद से आगे की कविता थी और उसने अपना कायाकल्प इतना अधिक कर लिया था कि बाद में उसे 'नई कविता' के नाम से जाना जाने लगा। प्रयोगवादी कवि ही आजादी के बाद नए कवि के रूप में अभिहित हुए। यह कविता छायावाद से एक प्रस्थान थी। इसीलिए नामवर सिंह ने इसकी विशेषता की पहचान छायावाद से हटकर कराई।

श्रीकांत वर्मा के शब्दों में किसी और कवि की कविताएँ उसका इतिहास हों न हों, लेकिन मुक्तिबोध की कविताएँ अवश्य ही उनका इतिहास हैं। जो इन कविताओं को समझेंगे, उन्हें मुक्तिबोध को किसी और रूप में समझने की जरूरत नहीं पड़ेगी। जिंदगी के एक-एक स्नायु के तनाव को एक बार जीवन में और दूसरी बार अपनी कविताओं में जीकर उन्होंने अपनी स्मृति हेतु सैकड़ों कविताएँ छोड़ी हैं और ये कविताएँ ही उनका परिचय हैं।

'गजानन माधव मुक्तिबोध' तार सप्तक के पहले कवि थे। मनुष्य की अस्मिता, आत्मसंघर्ष और प्रखर राजनीतिक चेतना से समृद्ध उनकी कविता पहली बार 'तार सप्तक' के माध्यम से सामने आई। कवि मुक्तिबोध ने ही 'नई कविता' की जमीन को मजबूत किया है। उनकी कविता की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं,

'मुझे कदम-कदम पर
चौराहे मिलते हैं
बाहें फैलाये।
एक पैर रखता हूँ
कि सौ राहें फूटती हैं,
मैं उन सब पर से गुजरना
चाहता हूँ।
इसी तरह वह लिखते हैं-
बहुत अच्छे लगते हैं-
उनके तजुर्बे और अपने-
अपने
सब अच्छे लगते हैं।
अजीब-सी अकुलाहट दिल
में उभरती है।'

वे तो दु:ख में भी जीनेवाले अप्रतिम कवि थे। उनकी इस कविता को देखें:

'दुनिया न कचरे का ढेर जिस पर,
दानों को चुगने वाला कुकुर
कोई मुरगा बाग दे जोरदार।'

> मनुष्य का मन, देह निर्भर न सही, पर देह निरपेक्ष या उससे स्वतंत्र नहीं होता। मन चाहे तो देह की सीमाओं का एक सीमा तक अतिक्रमण अवश्य कर सकता है, पर उससे स्वतंत्र नहीं हो सकता। मनुष्य का मन, उसकी चेतना, उसके विचार मूलत: उसकी जीवन स्थिति और जीवन-प्रणाली से अलग नहीं होते और न हो सकते हैं, बल्कि ठीक इसके विपरीत, आचरण और संस्कार के स्तर पर उनके रूपाकार का निर्धारण वही करते हैं। शिक्षा और ज्ञान से उत्पन्न विचार भी वास्तव में चेतना का हिस्सा तभी बनते है, जब उन्हें जीवन प्रणाली से कुछ समर्थन और पोषण प्राप्त होता है। ऐसा संभव नहीं कि हम एक तरह से जिएँ, दूसरी तरह से सोचें और फिर तीसरी तरह से आचरण करें। हाँ, वैसे करने का स्वांग जरूर भरा जा सकता है।

उनके पास भविष्यधर्मी दृष्टि हमेशा रही। 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' में उन्होंने लिखा है,

'कोशिश करो। कोशिश करो।
कोशिश करो जीने की।
जमीन में गड़कर भी।'

उनकी कविताओं में कहीं भी निराशा, अनास्था, पराजय और आत्महीनता की प्रवृत्तियाँ नहीं हैं, बल्कि जीवन के प्रति गहरी आस्था है।

'मैं कुछ गहरे में उतरना चाहता हूँ, जाने क्या मिल जाए।'

ऐसे ही इन पंक्तियों को देखें,

'समाज और साहित्य की
दुर्व्यवस्था का वह,
डूबता चाँद कब डूबेगा?
क्या होगा इन कविताओं का
कापी में लिखी हुई
टीन की पेटी हुई
टीन की पेटी में
ये कब तक रहेगी
घेरे किसी प्रकाशक को
हमने पूछा था।'

×××

'मुस्काये तुम
बीड़ी का कश खींचा
कहा – म्यूजियम में रखी –
जायेगी – मेरी कविता।'

मुक्तिबोध की कविताएँ तो पारंपरिक छंदों का अद्भुत विस्तार हैं। चाहे वह 'भूल-गलती अँधेरे में' हो या 'ब्रह्म राक्षस' या 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' हो, सभी कविताओं में पारंपरिक छंदों का दोहन कर उन्होंने उसे अपने तथ्य के अनुरूप ढाला है।

'पिस गया वह भीतरी
और बाहरी दो कठिन पाटों बीच
ऐसी ट्रेजडी है नीच।'

×××

'भूल-गलती
आज बैठी है जिरह बख्तर पहनकर
तख्त पर दिल के
चमकते हैं खड़े हथियार उसके दूर तक
आँखे चिलकती हैं नुकीले तेज पत्थर-सी
खड़ी है सिर झुकाये
सब कतारे
बेजुबाँ बेबस सलाम में
अनगिनत खंभों व मेहराबों-थमे
दरबारे-आम में।'

मुक्तिबोध की कविता छंदों के इन विविध रूपों से भरी पड़ी है। पर सबसे महत्वपूर्ण बात यही है कि छंद यहाँ कथ्य के प्रवाह को अपने में बाँधते हुए खुद भी परिवर्तित हो जाते हैं और यह छंद व कथ्य मिलकर मुक्तिबोध की कविता का वह स्वरूप बनाते हैं, जो केवल और केवल मुक्तिबोध की कविता की पहचान बनता है। मुक्तिबोध लिखते हैं–

'प्रश्न थे गंभीर शायद खतरनाक भी,
इसलिए बाहर के गुंजान
जंगलों से आती हुई हवा ने
फूँक मार एकाएक मशाल ही बुझा दी–
मुझको यों अंधेरे में पकड़कर
मौत की सजा की।'

कवि स्वभावत: भावुक होता है। गजानन माधव मुक्तिबोध हिंदी के ऐसे कवि हैं, जिन्होंने अपनी भावुकता को विचारशीलता और विवेकमयता से जोड़ा। 'एक साहित्यिक की डायरी' पुस्तक के कुछ अंश के पहले संस्करण की पांडुलिपि मार्च, **1964** में भोपाल में मुक्तिबोध जी ने मुझे सौंपी थी और वह जिस रूप में चाहते थे, उसी रूप में वह प्रकाशित हुई। उस पांडुलिपि में 'कुटुयान' और 'काव्य-सत्य' तथा 'कलाकार की व्यक्तिगत ईमानदारी' शीर्षक किश्तें नहीं थीं और फलस्वरूप वे पहले संस्करण में नहीं हैं। ये सारी डायरियाँ '**1957**', '**1958**' और '**1960**' में 'वसुधा' (जबलपुर) में प्रकाशित हुई थीं।

'डायरी' शब्द एक भ्रम पैदा करता है और यह गलतफहमी भी हो सकती है कि मुक्तिबोध की ये डायरियाँ भी तिथिवार डायरियाँ होंगी। लेकिन वास्तविकता यह है कि 'एक साहित्यिक की डायरी' केवल उस स्तंभ का नाम था, जिसके अंतर्गत समय-समय पर मुक्तिबोध को अनेक प्रश्नों पर विचार करने की छूट न केवल संपादन की ओर से बल्कि स्वयं अपनी ओर से भी होती थी। 'वसुधा' के पहले नागपुर के 'नया खून' साप्ताहिक में वह 'एक साहित्यिक की डायरी' स्तंभ के अंतर्गत कभी अर्द्ध-साहित्यिक और कभी गैर-साहित्यिक विषयों पर छोटी-छोटी टिप्पणियाँ लिखा करते थे, जो एक अलग संकलन के रूप में प्रकाशन के लिए प्रस्तावित हैं। उल्लिखित डायरी में केवल 'वसुधा' में प्रकाशित किश्तों, जो स्वयं में स्वतंत्र निबंध हैं, को शामिल करने का उनका उद्देश्य ही यही था कि वे न तो सामयिक टिप्पणियों को साहित्य मानते थे और न साहित्य को सामयिक टिप्पणी। वस्तुत: जैसा कि श्री 'अदीब' ने लिखा है, 'मुक्तिबोध की डायरी उस सत्य की खोज है, जिसके आलोक में कवि अपने अनुभव को सार्वभौमिक अर्थ दे देता है।'

नामवर सिंह के शब्दों में, 'कदाचित् आज अगर मूल्यांकन किया जाए तो घोषित कहानीकारों की अपेक्षा मुक्तिबोध ने कहानी की दुनिया में ही ज्यादा महत्वपूर्ण कार्य किया है। यदि गुलेरी जी अपनी एक कहानी 'उसने कहा था' के द्वारा अमर हो सकते हैं, तो मुक्तिबोध की 'क्लॉड ईथरली' ही हिंदी में एक ऐसी कहानी है कि दूसरे किसी आदमी ने न वैसी कहानी लिखी और न कोई लिखने

की क्षमता रखता है।' मुक्तिबोध ने कुल पच्चीस कहानियाँ लिखी हैं, जिनमें 'आखेट', 'मोह और मरण', 'मैत्री की माँग', 'एक दाखिल दफ्तर सांझ', 'जिंदगी की कतरन', 'प्रश्न', 'भूत का उपचार', 'क्लॉड ईथरली', 'समझौता' आदि उनकी ऐसी कहानियाँ हैं, जिन्हें हम अपने समसामयिक जीवन और युग विमर्श के केंद्र में रख सकते हैं।

कुमार विश्वबंधु ने मध्यवर्गीय मन की अंतर्कथा के रूप में 'जंक्शन' कहानी की बड़ी अच्छी विवेचना कुछ इस प्रकार की है। 'जंक्शन' कहानी में मुक्तिबोध द्वारा भारत के नवीन सामाजिक-राजनैतिक परिवेश में तथाकथित नव-शिक्षित आधुनिक मध्यवर्गीय व्यक्ति के मन के स्ट्रक्चर (मानसिक बनावट) और टेक्स्चर (मानसिक बुनावट) को उसकी तमाम जटिलताओं, कुटिलताओं, विद्रूपताओं के साथ न केवल एक्स्पोज किया गया है, बल्कि परिस्थितिवश उसकी आत्मा में छिपे हुए, मानवीय संवेदनाजन्य सौंदर्य और ऊष्मा से भरपूर शक्तिशाली आलोक वलयों की भी खोज की गयी है।

मनुष्य का मन, देह निर्भर न सही, पर देह निरपेक्ष या उससे स्वतंत्र नहीं होता। मन चाहे तो देह की सीमाओं का एक सीमा तक अतिक्रमण अवश्य कर सकता है, पर उससे स्वतंत्र नहीं हो सकता। मनुष्य का मन, उसकी चेतना, उसके विचार मूलत: उसकी जीवन स्थिति और जीवन-प्रणाली से अलग नहीं होते और न हो सकते हैं, बल्कि ठीक इसके विपरीत, आचरण और संस्कार के स्तर पर उनके रूपाकार का निर्धारण वही करते हैं। शिक्षा और ज्ञान से उत्पन्न विचार भी वास्तव में चेतना का हिस्सा तभी बनते है, जब उन्हें जीवन प्रणाली से कुछ समर्थन और पोषण प्राप्त होता है। ऐसा संभव नहीं कि हम एक तरह से जिएँ, दूसरी तरह से सोचें और फिर तीसरी तरह से आचरण करें। हाँ, वैसे करने का स्वांग जरूर भरा जा सकता है। स्वातंत्र्योत्तर राजनीति, समाज, धर्म, शिक्षा, संस्कृति और साहित्य में यह स्वांग खूब होता रहा है, हो रहा है और नव पूँजीवाद व नये बाजारवाद की तरफ से उसे खूब बढ़ावा भी मिल रहा है। इन सबके बीच हजारों वर्षों के विकास की प्रक्रिया में कमाए हुए मानवीय सत्य लगातार पीछे छूट रहे हैं और बेलज्ज पूँजी, बर्बर उल्लास के साथ सब कुछ को रौंदती, तबाह करती, लगातार आगे बढ़ रही है।

'जंक्शन' दरअसल स्वातंत्र्योत्तर भारतीय जीवन में व्याप्त इसी स्वांग और छल-छद्म पर उँगली रखनेवाली कहानी है। मुक्तिबोध की कहानी 'जंक्शन' स्वतंत्रता के बाद के निम्न मध्यवर्ग के मन की अंतर्कथा है, जिसमें उसकी आर्थिक बदहाली, जीवन की न्यूनतम सुविधाओं के अभावों के बीच, मन के किसी कोने में पहले सुविधा संपन्न जीवन के प्रति उसकी ललक, उसकी बौद्धिक प्रगतिशीलता, ज्ञान और शिक्षा से उपजा श्रेष्ठताजन्य सांस्कृतिक आभिजात्य बोध और इन सबके बीच धड़कता उसका कोमल संवेदनशील हृदय, उसका भीषण आत्मसंघर्ष, सब यहाँ एक साथ उपस्थिति कर दिए गए हैं।

'नशा' कहानी का नायक भी अपने चारित्रिक अंतर्विधियों को समझता है और कभी-कभी लज्जित भी होता है। परंतु 'जंक्शन' कहानी का नायक उससे आगे जाकर अपने अंतर्विधियों से लड़ता-जूझता हुआ दिखाई पड़ता है। ठंड से ठिठुरते निम्नवर्ग के बालक के प्रति अपने हृदय की लड़ता, उसे भयानक रूप से अशांत कर देती है। वह अनुभव करता है कि उसके हृदय में वह बाहर से भी कहीं ज्यादा ठंडक है, लेकिन वह हारता नहीं, लगातार उस ठंडेपन से उबरने की कोशिश करता रहता है। वह चाहता है कि उसके भीतर बालक के लिए थोड़ी-सी गर्मी पैदा हो। वह अपने मन को बार-बार कुरेदता है, कहता है, 'उठो, उठो, उस बालक को बिस्तर दो!'

कहानी में मौजूद यह आत्म संघर्ष ही, वस्तुत: मध्यवर्ग के लिए अपनी चारित्रिक विसंगतियाँ और आत्म-कुंठाओं से मुक्ति पाने का एकमात्र रास्ता है। इस रास्ते वह न केवल अपने लिए जीवन के सही मायने तलाश कर सकता है, बल्कि आज के कठिन ऐतिहासिक संकट की घड़ी में, समाज और राष्ट्र जीवन को भी अपना रचनात्मक योगदान दे सकता है, लेकिन जरूरी है कि वह अपनी आत्म-विसंगतियों से सीधा मुठभेड़ करे। एक बहुत लंबे समय से पाले-पोसे हुए अपने रोगों को ईमानदारी से उघारकर देखे, उसका इलाज करे, ढाँपे नहीं।

नागपुर से प्रकाशित होनेवाले समाचार पत्र 'नए खून' का उन्होंने संपादन भी किया। जबलपुर से निकलनेवाली पत्रिका 'वसुधा' में धारावाहिक रूप से उनकी 'डायरी' का प्रकाशन होता रहा। बस फिर क्या था, 'एक साहित्यकार की डायरी' तथा 'कामयानी एक पुनर्विचार' कृति ने गजानन माधव मुक्तिबोध का नाम साहित्यिक जगत में चर्चित कर दिया। उनका कोई स्वतंत्र काव्य-संग्रह उनके जीवनकाल में प्रकाशित नहीं हो पाया। मृत्यु के पहले श्रीकांत वर्मा ने उनकी केवल 'एक साहित्यिक की डायरी' प्रकाशित की थी, जिसका दूसरा संस्करण भारतीय ज्ञानपीठ से उनकी मृत्यु के दो महीने बाद प्रकाशित हुआ। ज्ञानपीठ ने ही 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' प्रकाशित किया था। पहले कविता संकलन के **15** वर्ष बाद **1980** में उनकी कविताओं का दूसरा संकलन 'भूरि भूरि खाक धूल' प्रकाशित हुआ और **1985** में राजकमल से पेपरबैक में छ: खंडों में मुक्तिबोध रचनावली प्रकाशित हुई, प्रमुख कृतियाँ 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', 'भूरि भूरि खाक धूल' (कविता संग्रह), 'काठ का सपना', 'विपात्र', 'सतह से उठता आदमी' (कहानी संग्रह), 'कामायनी एक पुनर्विचार', 'नयी कविता का आत्मसंघर्ष', 'नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' (आखिर रचना क्यों), 'समीक्षा की समस्याएँ', 'एक साहित्यिक की डायरी' (आलोचनात्मक कृतियाँ) एवं 'भारत का इतिहास और संस्कृति'।

- ए-**305** ओ सी आर, बिल्डिंग
विधान सभा मार्ग, लखनऊ
मोबाइल :**9415508695**

कहानी

मछुआरिन

- श्री प्रेम शंकर भगत -

सुबह ही डॉ राहुल अपने परिवार सहित भिलाई से विशाखपट्टणम पहुँचे हैं। उनके साथ पत्नी सुनीता के अलावा दोनों बेटियाँ, प्रिया और जया भी हैं। वे रेलवे स्टेशन के नजदीक ही एक होटल में ठहरे हैं। दोपहर के भोजन के पश्चात आज शहर के प्रमुख पर्यटन स्थलों में घूमने की योजना है। सबसे पहले कैलाश गिरि, फिर आई एन एस कुरसुरा, तत्पश्चात 'रामकृष्ण बीच' देखने की योजना है। 'रामकृष्ण बीच' शहर का सुंदरतम व चहल-पहल वाला समुद्र तट है। यहाँ रोज देश-विदेश के सैलानियों की भीड़ लगी रहती है।

डॉ राहुल का परिवार अपने योजनानुसार घूमते हुए 'रामकृष्ण बीच' पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही बेटियाँ व पत्नी अपना सामान रेत पर रखकर समुद्र की लहरों का आनंद उठाने के लिए समुद्र में उतर पड़े। डॉ राहुल वहीं रेत पर सामान के साथ बैठ गए और पत्नी एवं बेटियों की गतिविधियाँ देखने लगे। उनका ध्यान लहरों की अठखेलियों पर भी था। डॉ राहुल आज पूरे सात साल बाद विशाखपट्टणम आये थे। रेत पर बैठे-बैठे ही अपनी पुरानी यादों में खो गये। उनके जेहन में एक बार फिर उनका अतीत अपनी तस्वीरों के पन्ने पलटने लगा।

इसके पहले 'विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र' के 'जनरल अस्पताल' में वे डॉक्टर हुआ करते थे। वे लगभग पांच वर्ष तक यहाँ नौकरी करने के बाद भिलाई चले गये थे। उन्हें शुरु से ही तैराकी का शौक था। मगर उनका यह शौक तालाबों, स्वीमिंग पुलों और छोटी छोटी नदी, नालों तक ही सीमित था। यहाँ आने के बाद वे अक्सर साप्ताहिक अवकाश के दिन मन बहलाने के लिए संयंत्र के पास 'अप्पिकोंडा बीच' जाते थे।

उस दिन समुद्र का पानी ठहरा सा लग रहा था। सैलानियों को इस ठहराव का मतलब नहीं मालूम था। इसके पीछे का रहस्य यहाँ के अनुभवी मछुआरे ही जानते थे कि इतनी खामोशी किसी बडे तूफान के आने की निशानी थी। मछुआरों की नावें समुद्र तट की ओर लौटने लगी थीं। डॉ राहुल समुद्र में उतरे ही थे कि उन्हें एक युवती की आवाज सुनाई दी। वह कहना चाह रही थी कि 'साहब! तूफान आने वाला है, आप बाहर आ जाइए।' उन्होंने देखा, घुटनों तक साड़ी पहने और हाथ में जाल पकड़ी हुई एक सांवली सी युवती उन्हें सचेत कर रही थी।

'आसमान साफ है, पानी में कोई हलचल नहीं है। तूफान कहाँ से आ सकता है?' ऐसा सोचते हुए डॉ राहुल उसकी चेतावनी को नजरंदाज कर दिया और मुस्कुराते हुए पानी में उतर गए। युवती बेबस सी उन्हें पानी में तैरते और अठखेलियाँ करते देखती रही। जब और खड़ा नहीं रहा गया, तो रेत में पड़ी एक नाव पर बैठ गई।

डॉ राहुल समुद्र में आगे बढ़ते चले गए। धीरे-धीरे साफ-सुथरा आसमान स्याह हो गया। थोड़ी ही देर में मूसलाधार बारिश होने लगी। समुद्र की शांति भंग हो गई। लहरें विकराल रूप धारण करने लगीं। यह सब देख डॉ राहुल घबराए। उन्हें मछुआरिन की चेतावनी याद आने लगी। वे लहरों की चपेट में आने लगे और बेबस होकर अपने आप को लहरों के हवाले कर दिया। उन्हें अपनी मौत सामने नजर आने लगी, तभी उनकी पीठ पर किसी का हाथ पड़ा। उन्हें लगा, कोई हाथ पकड़ने की कोशिश कर रहा है। राहुल ने हाथ पकड़ लिया। युवती ने बड़ी मशक्कत से उन्हें किनारे पहुँचा दिया। डॉक्टर बेसुध पड़े थे। युवती ने उन्हें उल्टा लिटाया। उनका उपचार किया। थोड़ी होश साधने के बाद उन्होंने धीमी आवाज में कहा, 'तुम न आती तो शायद मैं...।' 'कोई बात नहीं साहब! यह तो मेरा फर्ज था', युवती ने कहा। कुछ ही मिनटों में राहुल को पूरा होश आ गया। राहुल को अपने कपड़ों की चिंता हुई।

युवती की नजर राहुल के पूरे शरीर पर पड़ी तो वह शरमा कर थोड़ी दूर जा खड़ी हुई। दोनों भीगे हुए थे। दोनों की आँखों में एक-दूसरे के लिए स्नेह जग गया था। युवती ने पूछा, 'क्या आप इस हालत में घर जाएँगे? आप मेरे घर चलिए। आपके कपड़े सूख जाएँ, तब जाइयेगा।' डॉ राहुल उस मछुआरिन युवती के पीछे हो लिए।

अप्पिकोंडा समुद्र तट से काफी हट कर मछुआरों की बस्ती है। कभी इन मछुआरों के घर कच्चे और कामचलाऊ होते थे। मगर इस्पात संयंत्र की स्थापना से अब मछुआरों और दूसरे छोटे काम करने वालों के जीवन में काफी बदलाव हो गया है। युवती इसी गाँव की रहने वाली थी। उसका नाम मीनम्मा था। उसके पिताजी इस्पात संयंत्र में छोटा-मोटा काम करते थे। मीनम्मा स्नातक स्तर तक पढ़ी थी। फिर भी मछलियाँ पकड़ने का पुश्तैनी धंधा उसके परिवार के लोग करते थे।

अपनी बेटी को एक अनजान के साथ देख मीनम्मा के माता-पिता ने पूछा, 'यह कौन है?' ये समुद्री तूफान में फँस गये थे। मैं इन्हें बचाकर लाई हूँ। इनके कपड़े भी तूफान में उड़ गए। इस हालत में ये अपने घर कैसे जाते?' मीनम्मा ने उत्तर दिया। मीनाम्मा की माँ दौड़कर अलमारी से एक लुंगी-कुरता निकाल कर

डॉ राहुल को थमा दी।

तूफान थम चुका था। मीनम्मा का पिता डॉ राहुल को उनकी कार तक छोड़ आया। अब डॉ साहब का मीनम्मा के घर आना-जाना शुरु हो गया। मीनम्मा को तो राहुल शुरु में ही भा गए थे, लेकिन अब राहुल को भी मीनम्मा अच्छी लगने लगी थी।

कहते हैं न कि इश्क और मुश्क कभी छिपाये नहीं छिपते। अस्पताल और बस्ती में डॉक्टर और मीनम्मा के प्यार की चर्चा होने लगी। मीनम्मा के पिता ने समझाया कि डॉक्टर साहब ऊँची जाति के अमीर आदमी हैं। उनका और हमारा कोई मुकाबला नहीं है। परंतु प्यार में पगी मीनम्मा को पिता की बात अच्छी नहीं लगी। पढ़ी-लिखी होने के कारण वह कुछ खुले विचारों वाली हो गई थी। डॉक्टर साहब को भी मीनम्मा के नैन-नक्श व रंग-रूप भा गया था। मगर उसके बदन से आती मछली की बदबू उन्हें सहन नहीं होती थी। मीनम्मा भी राहुल को दिल से चाहने लगी थी। इनके इश्क के चर्चे राहुल के घर तक जा पहुँचे। राहुल के माता-पिता खुले चिचारों के थे। बेटे की पसंद पर उन्हें कोई एतराज नहीं था। उनकी माँ ने अपनी होने वाली बहू को देखने का इरादा जताया।

लड़की साँवली थी। नैन-नक्श अच्छे थे। कसा हुआ बदन था। बोली भी मीठी थी, पर उसके घर से मछली की गंध आ रही थी। डॉ राहुल का परिवार शाकाहारी था। उनकी माँ को उबकाई आने लगी। किसी तरह वे वहाँ से बाहर आ गईं।

माँ ने बेटे से कहा, 'बेटा! तुम्हारी पसंद तो ठीक है, उनके घर और शरीर से आने वाली मछली की बदबू मैं सहन नहीं कर सकती।' 'माँ मैं यह बात समझता हूँ। यदि वह मछलियाँ पकड़ना छोड़ दे, तो यह बदबू समाप्त हो जाएगी।' राहुल ने माँ को समझाया। अगले दिन राहुल ने मीनम्मा से कहा, 'मेरी माँ तुम्हे बहू बनाने के लिए तैयार है।' यह सुनकर मीनम्मा खिल उठी। राहुल ने आगे कहा, 'यदि तुम मछलियाँ पकड़ना छोड़ दो तो।' मीनम्मा राहुल को गौर से देखने लगी। फिर बोली, 'डॉक्टर साहब! मैं मछलियों के बीच पैदा हुई हूँ और पली-बढ़ी हूँ। मछली पकड़ना मेरा पेशा है और शौक भी। मछली की गंध से मुझे कोई घृणा नहीं है। अगर आपकी बदबू आती है, तो आती रहे।' मीनम्मा की आवाज में तल्ख थी। 'तुम एक मछुआरे की बेटी हो। तुम्हें ऊँचे कुल की बहू बनने का मौका मिल रहा है। तुम एक डाक्टर की पत्नी बनने जा रही हो। मछली का पेशा छोड़ने में ही तुम्हारा भला है', राहुल ने उसे समझाया।

राहुल की बातों से मीनम्मा को क्रोध आ गया। वह बोली, 'डाक्टर साहब मेरा पेशा मुझे पसंद है। आप मुझे मेरी बदबू के साथ अपना सकते हैं तो अपनाइए, अन्यथा मैं, अपने घर में ठीक हूँ।' नाराज मीनम्मा ने अपने घर की राह पकड़ ली। राहुल बेबस उसे जाते देखते रह गए।

इस घटना के बाद राहुल का मन इस शहर से उचटने लगा और कुछ ही दिनों में नौकरी छोड़कर भिलाई चले गए थे। वहाँ जाकर अपनी पसंद की लड़की से शादी कर ली।

'आर के बीच' तट पर बैठे डॉ राहुल इन्हीं ख्यालों में खोये थे कि अचानक उनके कानों में एक आवाज गूँज पड़ी, 'डॉ साहब आप यहाँ?' उन्होंने ऊपर देखा कि सामने सलवार में मीनम्मा खड़ी थी। उसकी मांग में सिंदूर था। वह बहुत सुंदर लग रही थी। 'मीनम्मा तुम...।' डॉ राहुल चौंक पड़े। 'हाँ डॉक्टर साहब मैं', मीनम्मा ने बोलना शुरु किया, 'आप तो जानते ही हैं कि मुझे मछली और समुद्र से कितना लगाव है। इसीलिए आप से अलग होने के बाद, मैंने आगे पढ़ाई की और अब यहीं मत्स्य व सागर अनुसंधान एवं विकास संस्थान में मत्स्य निरीक्षक के पद पर कार्यरत हूँ और मेरे पति यहीं पर हिंदुस्तान शिपयार्ड लिमिटेड में इंजीनियर हैं। मेरा घर भी यहीं पास में है। इसीलिए मैं यहाँ रोज शाम को घूमने आती हूँ।'

इसी बीच सुनीता और बेटियाँ वापस आ गईं, 'चलिए जी! अब हो गया, वापस जाना है।' अचानक डॉ राहुल को पत्नी सुनीता की आवाज सुनाई दी तो दोनों ने उधर देखा। बच्चे और उनकी पत्नी समुद्र से बाहर आ गये थे। डॉ राहुल ने मीनम्मा का परिचय अपनी पत्नी से कराते हुए बताया कि 12 साल पहले उसने किस तरह उनकी जान बचाई थी।

मीनम्मा के आग्रह पर वे सभी रात के खाने पर मीनम्मा के घर गये। वहाँ वे उनके पति से मिले। मीनम्मा के पति वेंकटेश काफी शांत स्वाभाव के थे। खाने के दौरान भी बातों का सिलसिला चलता रहा।

डॉ राहुल मीनम्मा के घर की शान-शौकत को निहारते रहे और मन ही मन आत्मग्लानि में उसकी तारीफ करते रहे। खाने-पीने का सिलसिला खत्म हो गया था। वेंकटेश अपनी कार से डॉ राहुल के परिवार को होटल तक छोड़ आए।

काफी रात हो चुकी थी। दूसरे दिन सुबह की ट्रेन से उन्हें वापस भी जाना था। बच्चे एवं पत्नी सो गये थे, पर डॉ राहुल की आँखों में नींद नहीं थी। वे सारी रात मीनम्मा के बारे में ही सोचते रहे। वे मन ही मन कह रहे थे, 'मीनम्मा! कितनी दृढ़ है, ठीक सागर की लहरों की तरह।' उन्हें आज एहसास हो गया कि कोई काम छोटा या बड़ा नहीं होता, बल्कि उसके प्रति निष्ठा बड़ी या छोटी होती है।

- उप प्रबंधक (पी ई एम)
विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र,
विशाखपट्टणम
मोबाइल:+91 9701348076

व्यंग्य

काश! कोई मुझे भी एक बार बुद्धू कह देता

- श्री सीताराम गुप्ता -

कुछ दिन पहले हमारे पड़ोस में एक श्रीमती जी ने अपने पति नरेन से बाजार से जीरा लाने के लिए कहा। नरेन को जीरा और धनिया में हमेशा कंफ्यूजन रहता है और इसी कंफ्यूजन के चलते वह बाजार से जीरा के बजाए धनिया उठा लाया। नरेन की श्रीमती जी ने बस इतना ही कहा, 'निरे बुद्धू हो तुम।' कुछ दिन बाद नरेन की श्रीमती जी ने नरेन से आधा किलो हरी धनिया पत्ती माँगी तो नरेन कुछ और ही उठा लाया। श्रीमती जी ने अपना सिर पीट लिया और कहा, 'तुम ताउम्र बुद्धू ही रहोगे।'

मैंने एक दिन सही मौका देखकर नरेन से कहा, 'नरेन! भाभी जी ये जो बार-बार तुम्हें बुद्धू कहती हैं, क्या यह ठीक है? देख भाई! अब तो किसी को बुद्धू नहीं कहने का कानून भी बन गया है। बुद्धू कहने पर सजा...।' मैं अपनी बात पूरी भी नहीं कर पाया था कि नरेन ने किंचित मुस्कुराते हुए मुझसे कहा, 'तुम भी निरे बुद्धू हो।' मैंने जब पूछा कि मैं कैसे बुद्धू हूँ तो नरेन ने कहा, 'जो बुद्धू शब्द में छिपे अर्थ का आनंद नहीं ले सकता, वह बुद्धू नहीं तो और क्या है?'

मुझे लगा कि मुझमें बुद्धू कहलवाने की क्षमता और योग्यता है ही नहीं। मैं इस शब्द को अपने बचपन में ढूँढ़ने लगा। याद आया, जब भी गलती करता था तो माँ कहती थी, 'बुद्धू कहीं का!' कभी कभार माँ वैसे ही कह देती थीं, 'बुद्धू' और यह कहकर मुस्कुरा भी देतीं, मानो कह रही हों, तुमसे ज्यादा समझदार तो इस पूरी दुनिया में कोई नहीं है। माँ जब भी बुद्धू कहतीं, अच्छा लगता था। लेकिन गलती करने पर जब बुद्धू नहीं कहतीं तो डर सा लगने लगता। अब कानून कहता है कि बुद्धू कहने पर एफ आई आर दर्ज करा सकते हो। तो क्या अब मुझे माँ, दादी, ताई, चाची, बुआ, मौसी और अन्य उन सब महिलाओं के खिलाफ एफ आई आर दर्ज करा देनी चाहिए, जो अब भी मुझे बात-बात पर बुद्धू ही कहती हैं?

सवाल गलत होने पर स्कूल में मास्टरजी डाँटते हुए पूछते, 'बुद्धू है क्या?' और उनके यह कहने की देर होती, हमारे फौरन सवाल ठीक करके दिखाने में देर नहीं लगती। कॉलेज के दिनों में जब कोई लड़की बुद्धू कह देती तो उसके बुद्धू कहने में जो अपनापन होता था, वह बार-बार बुद्धू बनने के लिए उकसाता था। उस बुद्धू बनने का मजा भुक्तभोगी ही जानता है।

कालेज में सुंदर लड़कियाँ, स्मार्ट लड़कों को बात-बेबात बुद्धू ही कहती थीं और यह सुनते ही उनकी स्मार्टनेस कई गुना बढ़ जाती थी। वे उन लड़कियों के इस संबोधन पर उनके लिए आसामान से चाँद-तारे तोड़ लाने के लिए तत्पर रहते थे। हाँ, मुझे भी कुछ ऐसा ही लगता कि 'काश! मुझे भी एक बार कोई बुद्धू कह दे। गलती से ही सही, फिर चाहे गलती मान कर सॉरी बोल दे।' लेकिन यह हसरत कभी पूरी न हो सकी। इसलिए पढ़ाई में मन नहीं लगा और फाइनल तक पहुँचते-पहुँचते कालेज से जी उचट गया।

ज्ञान प्राप्त होने के बाद भगवान बुद्ध एवं उनके मत को भी उस समय के महान परंपरावादियों ने कुछ सोच-समझकर ही बुद्धू की संज्ञा से विभूषित किया होगा। बाद में यही बुद्धू शब्द परिवर्तित होकर बौद्ध बन गया होगा और बौद्ध शब्द आत्मज्ञान का प्रतीक हो गया होगा। वैसे भी जब तक हम भौतिक जगत के ज्ञान तथा विषय-वासनाओं से मुक्त नहीं हो जाते, स्वयं को बुद्धू के स्तर तक नहीं ले जाते, तब तक आत्मज्ञान की प्राप्ति असंभव ही है। इस प्रकार ऐतिहासिक दृष्टि से ही नहीं, आध्यात्मिक दृष्टि से भी बुद्धू शब्द किसी चमत्कार से किसी भी तरह से कम नहीं है।

इसी शब्द की करामात है कि जो अल्बर्ट आइंस्टीन एक महान गणितज्ञ बन गए। जब अल्बर्ट आइंस्टीन से किसी ने उनके एक महान गणितज्ञ और वैज्ञानिक बनने का कारण जानना चाहा तो उन्होंने कहा, जब मैं स्कूल में पढ़ता था तो पढ़ाई में एकदम बुद्धू था। बच्चे मुझे चिढ़ाते थे और मेरी कमीज पर पीछे बुद्धू लिख देते थे। अध्यापक भी कहते थे कि मैं गणित नहीं सीख सकता। ऐसी विषम परिस्थितियों में गणित सीखने का मेरा संकल्प और अधिक दृढ़ हो गया, जिसके कारण मैं यहाँ तक पहुँच पाया। आइंस्टीन को बुद्धू नहीं कहा जाता अथवा उसके कमीज पर बुद्धू शब्द नहीं लिखा जाता तो वह कभी इतना महान वैज्ञानिक व गणितज्ञ नहीं बन पाता।

आज भी विद्यार्थी गणित से बहुत खौफ खाते हैं। उन्हें इस खौफ से बाहर निकालने का एक ही रास्ता है और वह रास्ता यह है कि उन्हें भी बुद्धू कहा जाए। यदि उन्हें बुद्धू शब्द लिखी हुई डिजाइनर टी-शर्ट्स पहनने को दे दिये जायें, तो वे खुद गणित में होशियर हो जायें। ऐसी है करामात करने की ताकत है इस 'बुद्धू' शब्द में। तमाम वाक्यातों और सबूतों की रोशनी में मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि पढ़ाई का बुद्धू शब्द से गहरा संबंध है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। एक के बिना दूसरे की कल्पना भी नहीं की जा सकती। काश! इस कानून को बनाने वाले को भी किसी ने बुद्धू कह दिया होता। यदि किसी ने उसे भी बुद्धू कह दिया होता तो दुनिया के तमाम विषयों को छोड़कर वह इस नीरस विषय में सर नहीं खपाता।

- ए.डी. 106-सी, पीतम पुरा
दिल्ली-110034
फोन: 011-27313679
मोबाइल: +91 9555622323
ई-मेल: srgupta54@yahoo.co.in

जल प्रबंधन विभाग

इस्पात उद्योगों को जैसे विद्युत के मामले में बहुत खर्चीला माना जाता है, वैसे ही जल खपत के मामले में भी माना जाता है, अर्थात इस्पात बनाने में जल की खपत बहुत अधिक होती है। पुराने इस्पात संयंत्रों में उपयोग की जाने वाली प्रौद्योगिकियों, जो आधुनिक प्रौद्योगिकियों जैसी परिष्कृत नहीं थीं, उनमें जल की खपत बहुत अधिक होती थी। लेकिन प्रौद्यौगिकी विकास और प्राकृतिक संसाधनों के प्रति बढ़ती जागरूकता के कारण अब नए तरीके से पहल किए जाने लगे हैं।

राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड-विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र इस मामले में शुरुआत से ही जागरूक व अग्रणी रहा है। संयंत्र के अभिकल्पन चरण में ही क्षमता के अनुरूप कुल जल खपत का अनुमान लगाया गया और उसकी उपलब्धता हेतु ठोस उपाय किए गए। इस क्रम में 3 मिलियन टन प्रतिवर्ष द्रव इस्पात उत्पादन क्षमता और टाऊनशिप हेतु 70 मेगा गैलन (13,280

घनमीटर/घंटे) जल खपत का अनुमान लगाया गया था। हालांकि नई प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी सुधारों आदि की वजह से 3 मिलियन टन प्रतिवर्ष क्षमता के स्तर पर जल की कुल खपत 21 मेगा गैलन (क्रमश: 19 मेगा गैलन और 03 मेगा गैलन संयंत्र और टाऊनशिप के लिए) ही होती रही है। साथ ही 5 मेगा गैलन (945 घनमीटर/घंटे) जल का क्षरण वाष्पीकरण से भी होता है।

वैसे तो विशाखपट्टणम शहर समुद्र तट पर बसा है, लेकिन इसके आस-पास कोई नदी अथवा मीठे जल का स्रोत नहीं है। इसलिए यह शहर वर्षाजल अथवा बाहर से आपूर्ति किए जाने वाले जल पर पूर्णत: निर्भर है। राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड-विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र के जल की आवश्यकताओं

को पूरा करना भी एक चुनौती रही है। केंद्र व राज्य सरकारों के भरपूर सहयोग से कंपनी को एक दीर्घकालिक योजना के तहत जलापूर्ति की जाती है। कंपनी ने अपने परिसर में 300 हेक्टेयर से अधिक भूमि पर दो विशाल जलाशयों का निर्माण किया है, जिन्हें 'कणिति रिजर्वेयर' के नाम से जाना जाता है। इन जलाशयों की भंडारण क्षमता लगभग 16 मिलियन घनमीटर है। इन जलाशयों में जल की आपूर्ति एलेश्वरम जलाशय से की जाती है। एलेश्वरम जलाशय कणिति रिजर्वेयर से लगभग 173 किलोमीटर दूर है। एलेश्वरम जलाशय एक प्राकृतिक जलाशय है, जहाँ वर्षाजल एकत्र होता है, और नहरों के माध्यम से इसके जल को विभिन्न प्रयोजनों के लिए उपभोक्ताओं तक पहुँचाया जाता है। उपभोक्ताओं की बढ़ती आवश्यकताओं को देखते हुए अब इस जलाशय को एक नहर के माध्यम से गोदावरी नदी से भी जोड़ा गया है, जो वहाँ से लगभग 56 किलोमीटर की दूरी पर बहती है। गोदावरी नदी से जल को नहर में प्रेषित करने के लिए नदी के तट पर भारी क्षमता वाले 5 पंप हाऊस स्थापित किए गए हैं, जिनमें से प्रत्येक की क्षमता लगभग 5600 घनमीटर/घंटे है और ये निरंतर एलेश्वरम जलाशय में गोदावरी नदी का जल भेजते रहते हैं।

हालांकि जल को इतनी दूर संयंत्र तक ले आना एक बहुत बड़ी चुनौती होती है। जिस नहर के माध्यम से यह जल लाया जाता है, उसमें कभी-कभी दरारें आ जाना, कृषि कार्य हेतु

जल संरक्षण के मामले में जागरूकता होने और बेहतर प्रौद्योगिकी का उपयोग करने के कारण आज राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड की विशिष्ट जल खपत, भारत में ही नहीं बल्कि विश्व के प्रमुख इस्पात उत्पादकों जैसे पोहांग के 3.52 घनमीटर/टन द्रव इस्पात, ग्यांको के 3.43 घनमीटर/टन द्रव इस्पात, चीन के इस्पात संयंत्रों में 5.25 घनमीटर/टन द्रव इस्पात की तुलना में सबसे कम, लगभग 2.55 घनमीटर/टन द्रव इस्पात है। विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र की विशेषता यह भी है कि यहाँ से निकलने वाले प्रदूषित जल को यांत्रिक, रसायनिक और जैविक रूप से उपचारित करके पुन: उपयोग के लायक बना दिया जाता है तथा समुद्र में छोड़ा जाने वाला जल लगभग शून्य विषाक्त होता है।

किसानों द्वारा काट दिया जाना, भारी मात्रा में जल का वाष्पीकरण होना आदि शामिल हैं।

इस्पात संयंत्रों में जल का उपयोग मुख्यत: संयंत्र की प्रक्रियाओं को शीतलित करने व संयंत्र के टाऊनशिप में निवास करने वाले कर्मचारियों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए होता है। संयंत्र का टाऊनशिप 12 सेक्टरों में फैला है तथा यहाँ लगभग 12000 परिवारों के आवास की व्यवस्था की गई है। इतने बड़े टाऊनशिप को हरा-भरा रखने व उसके निवासियों को पेयजल की सुविधा उपलब्ध कराना अपने आप में एक चुनौती है।

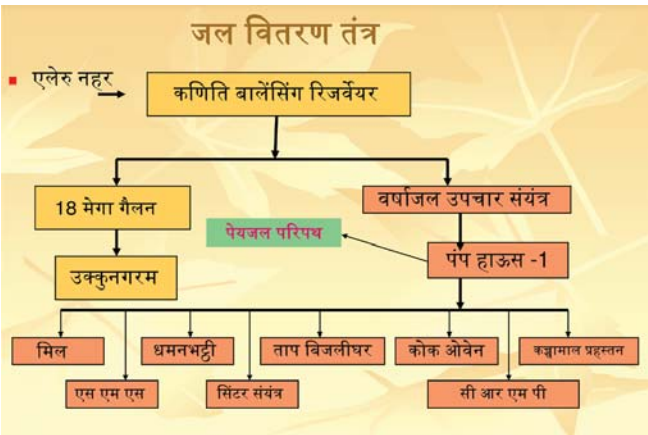

संयंत्र की जिन प्रक्रियाओं हेतु जल की आवश्यकता होती है, उनमें प्रमुख रूप से कोक ओवन गैस, सिंटर मशीन, धमनभट्ठी के शेल, एस एम एस के लांस और मोल्ड और मिलों की भट्ठियों को शीतलित करना आदि शामिल हैं। साथ ही जल का उपयोग उपस्करों व प्रक्रियाओं के शीतलन, साफ-सफाई, वाष्प उत्पादन, पेयजल आपूर्ति, अग्निशमन, स्वच्छता और स्लर्री निमूर्लन आदि हेतु होता है।

संगठन में जल के भंडारण हेतु जो 'कणिति बैलेंसिंग रिजर्वेयर' बनाया गया है, उसकी कुल भंडारण क्षमता 14.8×10^6 घनमीटर और उपयोग क्षमता 12.6×10^6 घनमीटर है, जो कंपनी के 100 दिनों की आवश्यकता को पूरा करने में सक्षम है। जैसाकि विदित है, कंपनी की उत्पादन क्षमता का 3.0 मिलियन टन/वर्ष से विस्तारण करके लगभग 6.3 मिलियन टन किया गया है। इससे जल का उपयोग और बढ़ने की संभावना है।

संगठन में जल की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए लगभग 410 करोड़ रुपये का व्यय किया गया है और जल को संयंत्र के विभिन्न उपभोक्ता विभागों एवं गंतव्य स्थानों तक पहुँचाने के उद्देश्य से लगभग 250 किलोमीटर लंबाई तक की पाइप लाइन बिछाई गई है।

इसीलिए जल की उपयोगिता को समझते हुए कंपनी में जल संरक्षण के कई उपाय किए जा रहे हैं, जिनमें वर्षा जल का संरक्षण एवं उक्कुनगरम से निकलने वाले सीवेज जल का उपयोग प्रमुख हैं। उक्कुनगरम के आस-पास के ऊँचाई वाले स्थानों से वर्षा का जल बहकर समुद्र में चला जाता है। इसे देखते हुए वी एस पी प्रबंधन ने इसके संरक्षण की बात सोची और इसके लिए जगह-जगह पर 9 पक्के रोक बाँध बनाए गए, 94 अंत:स्रवण बाँध बनाए गए, 18 कुएँ खोदे गए। इसी प्रकार उक्कुनगरम से निकलने वाले सीवेज जल को एकत्र करके उसे उपचारित किया जाता है तथा संयंत्र में प्रक्रियाओं के शीतलन हेतु उपयोग किया जाता है।

इस तरह के उपायों से कंपनी में जल उपयोग में होने वाले खर्च में 18 करोड़ रुपए प्रतिवर्ष बचत हो रही है। इसके अलावा पंप हाऊस नहीं चलाने से लगभग 5 करोड़ रुपए सालाना बिजली के बिल की बचत भी हो रही है।

जल संरक्षण के मामले में जागरूकता होने और बेहतर प्रौद्योगिकी का उपयोग करने के कारण आज राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड की विशिष्ट जल खपत, भारत में ही नहीं बल्कि विश्व के प्रमुख इस्पात उत्पादकों जैसे पोहांग के 3.52 घनमीटर/टन द्रव इस्पात, ग्यांको के 3.43 घनमीटर/टन द्रव इस्पात, चीन के इस्पात संयंत्रों में 5.25 घनमीटर/टन द्रव इस्पात की तुलना में सबसे कम, लगभग 2.55 घनमीटर/टन द्रव इस्पात है। विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र की विशेषता यह भी है कि यहाँ से निकलने वाले प्रदूषित जल को यांत्रिक, रसायनिक और जैविक रूप से उपचारित करके पुन: उपयोग के लायक बना दिया जाता है तथा समुद्र में छोड़ा जाने वाला जल लगभग शून्य विषाक्त होता है।

समग्र इस्पात उद्योगों की आवश्यकताओं के लिए जल का प्रबंधन करना एक प्रमुख कार्य होता है। प्राय: सभी समग्र इस्पात संयंत्र, जल प्रबंधन की समस्याओं से जूझते रहते हैं। विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र में इस समस्या से निबटने के लिए विशेष रूप से एक विभाग बनाया गया है और जल के वितरण को न्यायसंगत ढंग से संचालित व पुन: संचालित करने के उद्देश्य से संयंत्र में 30 पंप हाऊस, 8 जल उपचार संयंत्र, 4 ओवर हेड पंप, 22 कूलिंग टॉवर और 10 सीवेज पंप स्थापित किए गए हैं। विभाग की गतिविधियों को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए विभाग में लगभग सवा चार सौ अधिकारी व कर्मचारी नियुक्त हैं।

बाल-सुगन्ध

राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड, विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र में सितंबर, 2013 के दौरान कर्मचारियों के आश्रित व उक्कुनगरम एवं परित: क्षेत्रों में स्थित सभी स्कूली बच्चों के लिए दो श्रेणियों में 'निबंध लेखन प्रतियोगिता' आयोजित की गई। इसमें प्राप्त उत्कृष्ट लेखों को पत्रिका के प्रस्तुत अंक में दिया जा रहा है।

भारतीय अर्थव्यवस्था

- मास्टर साकेत रॉय -

भारत की अर्थव्यवस्था विश्व की पंद्रह सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। भारत में सन् 1991 के दौरान नई अर्थ नीति लागू हुई। इसे उदारीकरण और आर्थिक सुधार की नीति कहते हैं, तभी से भारत ने विश्व मानचित्र पर एक आर्थिक महाशक्ति के रूप में उभरना आरंभ किया है। पहले भारतीय उद्योगों और व्यापार पर सरकारी नियंत्रण का बोलबाला हुआ करता था, इसीलिए नए आर्थिक सुधार लागू करते समय इसका जोरदार विरोध भी हुआ। लेकिन सरकार ने मान लिया था कि आर्थिक सुधारों को लागू किए बिना देश के आर्थिक विकास की गति को तेजी से बढ़ाना संभव नहीं है। इसीलिए सरकार ने भारी विरोध के बाद भी इन सुधारों को लागू कराया। बाद में आर्थिक सुधारों में अच्छे परिणाम आने से विरोधियों के रवैये में नरमी आने लगी और पारंपरिक रूप से इन सुधारों का विरोध करने वाली राजनीतिक पार्टियाँ भी इन सुधारों को लागू करने के पक्ष में आ खड़ी हुईं।

हालांकि मूलभूत ढांचे में तेज प्रगति न होने से एक बड़ा तबका अब भी नाखुश है और एक बड़ा हिस्सा इन सुधारों से अभी भी लाभान्वित नहीं हुआ है ।

लगभग 568 अरब डॉलर के सकल घरेलू उत्पाद के साथ इस समय भारत वैश्विक अर्थव्यवस्था में 92वें स्थान पर है। परंतु प्रति व्यक्ति आय कम होने की वजह से इस प्रगति का कोई मायना नहीं रहा। विश्व बैंक के अनुसार सन् 2003 में प्रति व्यक्ति आय के लिहाज से भारत 143वें स्थान पर था। पिछले वर्षों के दौरान भारत के वित्तीय संस्थानों ने देश के विकास में बड़ी भूमिका निभायी है।

भारतीय अर्थव्यवस्था के संदर्भ में 1 रुपये से 100 पैसे, वित्तीय वर्ष से 1 अप्रैल से 31 मार्च की अवधि, व्यापार संगठनों से साफ्टा, एशियन और विश्व व्यापार संगठन अभिप्रेत हैं। भारत का सकल घरेलू उत्पादन में चौथा स्थान है। यहाँ के सकल घरेलू उत्पाद 3.033 खरब डालर के हैं। यहाँ की मुद्रास्फीति दर 3.8% है और बेरोजगारी दर 9.5% है। अमेरीकी डालर की तुलना में रुपये का मूल्य 63 है।

अगर आज की बात करें तो हम कह सकते हैं कि भारतीय अर्थव्यवस्था सुधार की स्थिति में तो है, लेकिन अभी भी बहुत नाजुक हालत में है। डॉलर की कीमत रुपये के मुकाबले मजबूत होती जा रही है। हम कई क्षेत्रों में नुकसान उठा रहे हैं और इन सब के कारण महंगाई भी लगातार बढ़ती जा रही है। सरकारी नीतियाँ भी काफी हद तक इसके लिए जिम्मेदार हैं, तो अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ और वैश्विक मंदी की वजह से भी हम बहुत पिछड़ गये हैं। इन सब के बीच कई दुर्भाग्यपूर्ण घोटालों ने हमारी स्थिति और भी दयनीय बना दी है। इस समय भारत में बेहतर सरकारी नीतियों को बनाने की जरूरत है तथा निरक्षरता को दूर करने एवं कृषि विकास को बढ़ावा देने, भ्रष्टाचार एवं गरीबी व बेरोजगारी को जड़ से निकाल फेंकने की आवश्यकता है।

इससे भारत में नये विकास के सूरज का उदय होगा, जो हमें फिर से सोने की चिड़िया बनाएगा। अत: कह सकते हैं कि

'गर सुधरे अर्थव्यवस्था भारत की,
औ' देश से मिट जाए
गरीबी, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार,
तो नये सूरज का उदय होगा,
जिससे होगा देश व देशवासियों का
भविष्य उज्ज्वल।।'

- 10 वीं कक्षा
केंद्रीय विद्यालय
विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र
विशाखपट्टणम

बाल-सुगन्ध

हमारी अर्थव्यवस्था और चुनौतियाँ

- सुश्री सी एच भारती -

'अर्थ' अर्थात 'धन'। धन किसी भी व्यक्ति, समाज या देश की उन्नति के लिए अत्यंत आवश्यक है। धन के सुव्यवस्थित उपयोग से ही किसी भी व्यक्ति, समाज या देश की उन्नति संभव हो सकती है। कोई भी देश तभी विकसित हो सकता है, जब उसकी आर्थिक नीति मजबूत हो।

स्वतंत्रता के पूर्व भारत की अपनी कोई अर्थव्यवस्था नहीं थी। इसलिए देश पिछड़ा हुआ था। किंतु आजादी के बाद पंचवर्षीय योजना में आर्थिक नियोजन पर विचार किया गया। इसके द्वारा देश में कुटीर उद्योग, कृषि एवं औद्योगिक विकास हेतु पूँजी निवेश किया गया, जिससे भारत की आर्थिक स्थिति में सुधार होने लगा। जनता का आर्थिक स्तर भी सुधरने लगा।

किंतु वर्तमान में भारत आर्थिक संकट से गुजर रहा है। देश की आर्थिक व्यवस्था डगमगा रही है, जिसके कई कारण हैं। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार व्यवस्था भारत में मूल्य-वृद्धि का एक प्रमुख कारण बन गया है। बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ अपने सुविधानुसार मूल्यों को बढ़ाते एवं घटाते हैं। इसका घरेलू उद्योग पर भी प्रभाव पड़ता है।

काला धन :

काले धन का आज कितना बोलबाला है, इसका जीवन के हर क्षेत्र में अनुभव किया जा सकता है। काले धन के अनिष्टकारी प्रभाव के कारण सरकार की सभी नीतियाँ निष्फल होती जा रही हैं। देश का धन विदेशों में जा रहा है और सोने का आयात अधिक मात्रा में हो रहा है, क्योंकि भारतवासी सबकी तुलना में अधिक सोना खरीदते हैं।

न केवल सोना, किंतु खनिज, तेल एवं अन्य पदार्थ जैसे गेहूँ आदि का भी आयात होता है, जिसका मूल्य डालर में चुकाया जाता है। इस प्रकार आयात में वृद्धि एवं निर्यात में कमी के कारण भारत को आर्थिक संकट का सामना करना पड़ रहा है।

अमेरीका, जापान, जर्मनी जैसे विकसित देश नित नये अस्त्र एवं शस्त्र बनाने में लगे हुए हैं, जिनकी तुलना में भारत आज भी बहुत पिछड़ा हुआ है। यही नहीं, घरेलू वस्तुओं के उत्पादन के क्षेत्र में भारत इन देशों से बहुत पीछे है। इसी कारण हमें ऐसी चीजों हेतु उनपर निर्भर होना पड़ रहा है।

भारतीय कानून व्यवस्था में कर की चोरी के नियंत्रण हेतु कोई ठोस प्रावधान नहीं हैं। यही कारण है कि बड़े-बड़े उद्योगपति भी कर की चोरी करने से नहीं चूकते। इससे सरकार को घाटा उठाना पड़ रहा है।

भारत में तेल, कोयला जैसे प्राकृतिक संसाधनों के भंडार हैं। इनसे देश आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकता है। किंतु भ्रष्टाचार एवं विविध घोटालों के कारण यहाँ भी देश को बहुत नुकसान उठाना पड़ रहा है। लोगों को इन संसाधनों के सदुपयोग हेतु प्रेरित करना होगा।

किसी भी देश की अर्थिक स्थिति को समझने के लिए वहाँ की सकल घरेलू उत्पाद क्षमता का आकलन किया जाता है। भारत की घरेलू उत्पादन क्षमता वर्तमान में केवल **4.3%** है, जिससे भारत की दयनीय आर्थिक स्थिति स्पष्ट होती है।

इन सब के आलावा निरक्षरता, गरीबी, बेरोजगारी आदि सामाजिक समस्याएँ भी भारत के आर्थिक संकट को बढ़ा रही हैं। इन सब के कारण जनता का आर्थिक स्तर गिरता चला जा रहा है। लोगों को महँगाई, बेरोजगारी, भूखमरी, अशिक्षा, शोषण, भ्रष्टाचार आदि समस्याओं से निजात पाने के लिए अर्थ व्यवस्था को संतुलित करना आवश्यक है। इसके लिए सरकार को अपनी आर्थिक नीतियों पर ध्यान देना होगा।

सर्व प्रथम काले धन एवं भ्रष्टाचार पर रोक लगानी होगी। इसके लिए कड़े कानून की आवश्यकता है। कर की चोरी न हो, इसके लिए लोगों में जागरूकता लानी होगी।

सरकार को घरेलू उद्योग के विकास के लिए कार्य करना होगा, जिससे हमारी उत्पादन क्षमता में वृद्धि हो एवं अधिक से अधिक लोगों को रोजगार मिले। साथ ही आवश्यक वस्तुओं की कीमत कम करने के उपाय भी किये जाने होंगे।

आयात में कमी एवं निर्यात में वृद्धि के लिए प्रयास किया जाना चाहिए। बढ़ती जनसंख्या पर रोक लगानी होगी और रोजगार के अवसर बढ़ाने होंगे। साथ ही निरक्षरता के उन्मूलन व शिक्षा के प्रसार आदि पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है।

उपसंहार :

समस्त आर्थिक नीतियों की सफलता तभी प्राप्त हो सकती है, जब सरकार एवं जनता दोनों मिलकर इसे सफल बनाने का प्रयास करें। इसके लिए जरूरत है एक दृढ़ इच्छा शक्ति एवं ठोस उपाय करने की।

- दसवीं कक्षा
चैतन्या पब्लिक स्कूल
मोबाइल: +91 9160819543

भारतीय अर्थव्यवस्था: सामाजिक असमानता

- सुश्री नमिता भारती -

साधारणत: मनुष्य को केवल रोटी, कपड़ा और मकान की चिंता रहती है। जिन्हें ये तीन प्राप्त हो जाते हैं, उन्हें कुछ और सुख-साधन जुटाने की चिंता पकड़ लेती है। सरकारी नीतियाँ, नियम, कानून, विविध प्रकार के ग्रंथ व शास्त्र सभी मुख्यत: मध्यम श्रेणी के लोगों पर लागू होते हैं। गरीबों के लिए सरकारी नीतियों में बहुत कुछ नहीं रहता। इसीलिए इस संसार में गरीब और मध्यम श्रेणी का फायदा उच्च श्रेणी के लोग उठाते हैं। यह एक प्रकार का शोषण है और इससे समाज का रूप बिगड़ता है। समग्र विकास के लिए आवश्यक है कि हर श्रेणी के लोगों को अपने विकास के लिए अपनी अहमियत को जानना चाहिए व विकास की सीढ़ी के ऊपरी पायदान पर अपनी जगह बनाने की कोशिश करनी चाहिए।

वास्तव में अन्त: चेतन इच्छाओं को देखना आसान नहीं है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि दरिद्रों की अवचेतन इच्छाओं को सामाजिक सम्मोहन से मिटाया नहीं जा सकता, उसे मात्र कुछ समय के लिए दबाया जा सकता है। ये इच्छाएँ इतनी प्रबल होती हैं कि अंत:मन में बार बार हिलोरें लेती हैं। अत: नई-नई इच्छाओं को पैदा करने की अपेक्षा अवचेतन में निहित इच्छाओं को पहचानकर उसकी पूर्ति में लग जाना चाहिए।

वस्तुत: समाज के विकास के लिए सरकार को अपना पल्ला नहीं झाड़ना चाहिए, बल्कि समाज के विकास के लिए हर जरूरी कार्य के लिए उसे ठीक उसी तरह से जिम्मेदारी लेना चाहिए, जैसे सड़क, बिजली, पानी, शिक्षा व चिकित्सा की जिम्मेदारी सरकार की है, उसी तरह से आर्थिक विकास के अन्य पहलुओं की देख-रेख भी सरकार की है। लेकिन दुर्भाग्य से अब सरकारें अपनी जिम्मेदारियों से भाग रही हैं और सामाजिक विकास के हर कार्य को निजी स्वामित्व वाली कंपनियों या एजेंसियों को सौंप रही हैं, जो सामाजिक विकास एवं सरकारी नियंत्रण की दृष्टि से उचित नहीं है।

नई आर्थिक नीति ने छिछले स्तर पर समाज का विकास किया है और साथ ही समाज में जो असमानता पैदा हुई है, वह मानवता के लिए घातक है। नई आर्थिक नीति से देश में जिस तरह की अर्थव्यवस्था जन्मी है, उससे सामाजिक न्याय संभव नहीं है। इस व्यवस्था ने अमीर को अमीर और गरीब को गरीब बनाने में अहम भूमिका निभाया है। जबकि होना यह चाहिए था कि आर्थिक असमानता का अंतर कम हो, ताकि सामाजिक असमानता में कमी आए। लेकिन ऐसा होता दीख नहीं रहा है।

देश के नीति निर्माताओं को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति में निहित क्षमताओं का विकास करे और उस व्यक्ति में छिपी क्षमता का देशहित में उपयोग करे तथा साथ ही व्यक्ति को उसकी क्षमता और योगदान से इतना जरूर लाभ मिल सके कि वह तथा उस व्यक्ति के परिवार के सभी सदस्यों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। आज देश के पिछड़ेपन का कारण सामाजिक अन्याय और संसाधनों का असमान वितरण है। समाज की इतनी दुर्दशा तो पहले भी नहीं थी, हालांकि अनादि काल से समाज में असमानता रही है, फिर भी सभी सुखी थे। कारण यह था कि सभी एक दूसरे का ख्याल रखते थे। मानते हैं कि सामाजिक असमानता, छुआछूत, साम्प्रदायिकता आदि ने समाज को बर्बाद किया है, लेकिन वर्तमान आर्थिक नीति ने नई समस्या पैदा कर दी है।

भारत के आर्थिक इतिहास पर दृष्टि डाल कर विचार करते हैं, तो पाते हैं कि विदेशी निवेश को पहले कभी अवसर नहीं दिया गया था। कच्चे माल का निर्यात भी देश के हित में नहीं है। अत: वर्तमान में देश की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए कच्चे माल का निर्यात एवं विदेशी निवेश पर पूर्ण रूप से प्रतिबन्ध लगना चाहिए। साथ ही ऐसा प्रयास होना चाहिए कि देश हर क्षेत्र में आत्मनिर्भरता की ओर बढ़े, ताकि अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों के कुप्रभाव से देश पीड़ित न हो।

श्रमिकों की आर्थिक व सामाजिक स्तर में गिरावट आई है। हमारी मुद्रा की स्थिति खराब हुई है। एक देश पूरे विश्व बाजार पर हावी हो गया है। विश्व की सुव्यवस्था के लिए बने अनेक संगठन संयुक्त राष्ट्र संघ, ग्रीनपीस, यूनिसेफ, नेटो, विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन, डब्ल्यू एच ओ इत्यादि आज विकसित देशों की जेब में बंद होकर रह गए हैं। इस समस्या से निपटने का एक ही उपाय है कि विकासशील देश भी अपना समूह गठन करें, ताकि वे विकसित देशों पर अपना दबाव बना सकें। सरकार आत्म-निर्भरता के लिए प्रयास करे व घरेलू उद्योगों को प्रोत्साहन दे। आयकर को तर्कसंगत बनाएँ। उन वस्तुओं पर अधिक कर लगाएँ, जो धनी लोग उपयोग करते हैं। ग्रामीण विकास के लिए ऐसी योजनाओं को लागू करें, जिनसे शहरों की ओर पलायन न हो और लोगों को गाँव में रोजगार मिले और उनका जीवन सुखी हो सके।

- दसवीं कक्षा
डी ए वी सेंटेनरी पब्लिक स्कूल
उक्कुनगरम

अध्यात्म

संस्कार

सामान्यत: संस्कार का अर्थ होता है संस्कृत करना अथवा शुद्ध करना या सम्यक या उपयुक्त बनाना। किसी साधारण, विकृत अथवा विद्रूप वस्तु को विशेष क्रियाओं द्वारा जीवन के उत्कर्ष को प्राप्त करने के लिए उत्तम बना देना ही उसका संस्कार करना होता है। अर्थात किसी साधारण वस्तु को परिष्कृत करके विशिष्ट वस्तु में परिवर्तित करना ही संस्कार कहलाता है। यही परिष्कार यदि मनुष्य के आचरण में किया जाता है, तो वह संस्कार युक्त होता है।

अपने संस्कारों की उत्कृष्टता से ही एक साधारण मनुष्य महान बन जाता है और यह ऐसे ही नहीं होता। इसके लिए मनुष्य को वैसे ही तपना पड़ता है, जैसे खदान से निकले सोने व हीरे को चमक पाने के लिए तपन या तराशन के कष्टों को झेलना पड़ता है। इसके लिए मानव के कर्म व उसके लिए उपलब्ध सुविधाओं (ज्ञान-विज्ञान प्रदान करने वाली सुविधाओं और सामाजिक परिवेश) का उत्कृष्ट होना बहुत जरूरी होता है।

संस्कारों के सहयोग से मानव अज्ञान और पाप से दूर होता है तथा ज्ञान-विज्ञान और आचार-विचार के नजदीक आता है। संस्कारों से हमारी आत्मा, विचार और कर्म को शुचिता प्राप्त होती है। भारतीय दर्शन में मलापनयन, अतिशयाधान और न्यूनांगपूरक नामक तीन प्रकार के संस्कार बताए गए हैं। पहला मलापनयन संस्कार होता है, जिसके अंतर्गत मनुष्य के भीतर अंतर्निहित समाज सापेक्ष गुणों को परिष्कृत किया जाता है। अतिशयाधान दूसरे प्रकार का संस्कार है, जिसके अंतर्गत मानव के आंतरिक व बाह्य गुणों में विशेष प्रयास से उत्कृष्टता लाई जाती है। न्यूनांगपूरक संस्कार विधि से आशय वैसा ही है, जैसा कि किसी अच्छे मकान का रंगरोगन करके उसकी शोभा बढ़ाई जाती है।

उदाहरण के तौर पर जैसे हम किसी दर्पण पर जमी धूल को पोंछ देते हैं तो वह मलापनयन की श्रेणी में आता है और यदि उस दर्पण को किसी साफ करने वाले तत्व से साफ करके उसके गुण में वर्धन करते हैं तो उसे अतिशयाधान कहा जाता है। इसी प्रकार यदि दर्पण के आंतरिक (गुणधर्म) तत्वों को प्रभावित किए बिना उसके इर्द-गिर्द कोई सजावट कर दिया जाए, जिसके कारण उसके सौंदर्य में वृद्धि हो जाए, तो इसे न्यूनांगपूरक संस्कार कहते हैं।

विश्व के विभिन्न धार्मिक ग्रंथों में संस्कार के महत्व का उल्लेख मिलता है। लेकिन धार्मिक संस्कार प्राय: पूर्व धारणाओं से अभिप्रेरित होते हैं और बदलते परिवेश के लिए उपयुक्त नहीं होते। हिंदू धर्म के धार्मिक संस्कारों के संबंध में ऐसा उल्लेख मिलता है कि ऋग्वेद में किसी विशेष प्रकार से संस्कारों का वर्णन नहीं मिलता, लेकिन उसके कुछ सूक्तों में विवाह, गर्भाधान और अंतेष्टि से संबंधित संस्कारों के अंश मिलते हैं। ऐसे ही यजुर्वेद और अथर्ववेद में भी बहुत कुछ नहीं मिलता है, लेकिन गोपथ और शतपथ ब्राह्मण में अपेक्षाकृत अधिक संस्कारों का उल्लेख मिलता है। गौतम स्मृति तक पहुँचते-पहुँचते तो इन संस्कारों की संख्या 40 तक हो जाती है।

बौद्ध धर्म की उत्पत्ति और उसके विकास के कारण बहुत से वैदिक धार्मिक संस्कारों व विश्वासों में बदलाव आया और भारतीय दर्शन ज्ञान आधारित बनने लगा। इससे भारतीय दर्शन का मूल्यवर्धन हुआ। ईसाई धर्म में भी कुछ संस्कारों का वर्णन मिलता है, लेकिन उनकी संख्या बहुत ही कम है। इस संदर्भ में उल्लेखनीय बात यह है कि ईसाई धर्म में ज्ञान के ऊपर बहुत बल दिया गया है। इसी प्रकार इस्लाम में भी ज्ञान को ही सर्वोपरि माना गया है।

वर्तमान परिवेश में संस्कार का अर्थ बिल्कुल ही बदल गया है। अब संस्कार की परिभाषा पूर्णत: लौकिक व अध्यात्मिक ज्ञान पर आधारित है। साथ ही मनोविज्ञान और तर्कशास्त्र के सिद्धांत भी अब संस्कार की परिभाषा और उसके दायरे पर हावी हैं। अर्थात अब संस्कार की परिधि सभी धर्मों, पंथों और संस्कृतियों का निचोड़ है, साथ ही यह वर्तमान सामाजिक और संवैधानिक प्रावधानों के अनुरूप भी है।

कहा जाता है कि व्यक्ति के संस्कार ही उसे बुलंदियों पर ले जाते हैं तथा वही उसकी परिस्थितियों के लिए जिम्मेदार भी होते हैं। यही कारण है कि समाज में संस्कारहीन व्यक्ति सर्वथा त्याज्य और संस्कारवान सर्वप्रिय हो जाता है। ज्ञान अर्जित कर लेने मात्र से कोई संस्कारवान नहीं हो जाता, संस्कारवान बनने के लिए अर्जित ज्ञान का उपयोग समाज के सापेक्ष करना पड़ता है। समाज में भी कई ऐसे उदाहरण मिल जाते हैं, जब ज्ञानी व्यक्ति को त्यागकर संस्कारवान व्यक्ति को वरीयता दी जाती है। मनोवैज्ञानिकों ने भी माना है कि ज्ञान, बुद्धि व विवेक से जुड़ा हुआ तत्व है तथा संस्कार, मन अथवा चित्त से जुड़ा हुआ तत्व है। बुद्धि हमें कर्मों के प्रति अभिप्रेरित कर सकती है, लेकिन कार्य का निष्पादन हमारे अंतर्मन में बसे संस्कार के प्रवृत्त होने से ही हो सकता है। इसीलिए बुद्धि से अभिप्रेरित होकर गलत काम किया जा सकता है, लेकिन संस्कार, व्यक्ति को गलत काम करने से मना करता है। इस प्रकार संस्कार को व्यक्ति एवं समाज दोनों के सापेक्ष और सर्वहितकारी माना गया है।

कहानी

पुण्यात्मा

– श्री रमेश शर्मा –

अविनाश गेस्टहाऊस के स्वागत कक्ष में बैठे मौसमी का इंतजार कर रहा था। तभी अचानक उसके मोबाइल के पटल पर एक संदेश उभर आया। संदेश पढ़कर उसके चेहरे का रंग उड़ गया और उसकी आँखों में एक तरह की उदासी और दीखने लगी। मौसमी को अपने पति की आँखों में किसी उदासी का अंदेशा नहीं था, पर परिस्थितियों में आये अचानक इस बदलाव की वजह से वह अनजान थी और ठीक-ठीक से वह कुछ भी समझ नहीं पा रही थी। 'क्या हुआ आज तबीयत थोड़ी ठीक नहीं लग रही है आपकी...', मौसमी न चाहते हुए भी पूछ लिया। अविनाश ने उसका कोई जवाब नहीं दिया और अपनी आँखें संदेश पर ही गड़ाये रखीं।

पंद्रह दिन ही हुए थे उनकी शादी को, गजब की अण्डरस्टेंडिंग और उत्साह था पति-पत्नी के बीच! हनीमून का जिक्र आया तो अविनाश ने शिमला की हरी-भरी हसीन वादियों का चुनाव किया था। मौसमी हाउसवाइफ थी, उसे प्रकृति एवं लोक जीवन से बेहद लगाव था। इसलिए उसने भी शिमला जाने पर उत्सुकता से हामी भरी थी। वे शिमला के लिए एक सप्ताह की यात्रा पर रवाना हुए थे।

पिछले तीन दिनों से वे शिमला के एक सुंदर से गेस्टहाऊस में ठहरे हुए थे। उनके दिन मजे से गुजर रहे थे। उनकी यात्रा सुबह शुरु होती, टैक्सी लेकर वे शहर से दूर पहाड़ की रमणीय स्थलों का लुत्फ उठाते और शाम को ही गेस्टहाऊस लौटते। दिन का लंच वे बाहर ही कहीं ले लेते, पहाड़ी जीवन उन्हें बहुत भा रहा था, मौसमी भी बहुत खुश थी।

आज चौथे दिन भी उन्हें यात्रा पर निकलना था। अविनाश नहा-धोकर तैयार हुआ था और गेस्टहाऊस के रिसेप्शन काउंटर के सामने सोफे पर बैठकर अखबार के पन्ने पलट रहा था, तभी उसकी मोबाइल पर वह संदेश उभर आया था, 'देबू मुखर्जी नहीं रहे!' देबू मुखर्जी के आगे कोष्ठक में 'समाजसेवी देबू गुरुजी' लिखा हुआ था, जिसे पढ़कर उसके दिमाग में एक झटका-सा लगा। सोलह साल पहले की बीती बातें याद करने की उसने भरसक कोशिश की। देबू गुरुजी हिमाचल प्रदेश के ही मूल निवासी थे। उनकी पैतृक संपत्ति हिमाचल में ही थी। उनके पिता केंद्र सरकार की नौकरी के सिलसिले में छत्तीसगढ़ आये थे, तो पिता के साथ वे भी छत्तीसगढ़ में ही पले-बढ़े थे। छत्तीसगढ़ में ही उन्होंने अपनी शिक्षा-दीक्षा पूरी करके यहीं पर शिक्षक बन गए। सेवानिवृत्ति के उपरांत वे अपने पैतृक निवास शिमला के पास के एक गाँव में आकर पुन: बस गए थे।

अविनाश को यह तय करने में कोई परेशानी नहीं हुई कि ये वही देबू गुरुजी थे, जिन्होंने उसके जीवन की दिशा ही बदल दी थी। यह तय होते ही उसकी आँखें नम हो गईं। मौसमी पूरी तरह तैयार होकर बगल में आ बैठी थी। पति की नम आँखों को देखकर वह समझ तो गयी कि अविनाश को किसी घटना से गहरा दु:ख पहुँचा है, पर वह जान न सकी कि आखिर कौन-सी घटना घट गयी है कि अविनाश इतना उदास हो गया है? उसने पूछा भी कि आखिर किस बात से उन्हें दु:ख पहुँचा है? पर अविनाश ने उस वक्त भी चुप्पी साध रखी थी।

कुछ अंतराल के बाद अविनाश ने सामान्य होते हुए मौसमी से कहा, 'आज हम घूमने नहीं जाएँगे। हम मंदिरों में जाकर प्रार्थना करेंगे।' मौसमी को अविनाश की बात भा गयी, न जाने क्यों उसे भी आज भगवान के दर्शन की तीव्र इच्छा हो रही थी, वह सहर्ष तैयार हो गयी। टैक्सी तैयार खड़ी थी। वे मंदिरों के लिए निकल पड़े। रास्ते में मौसमी ने फिर जानना चाहा कि आखिर किस बात से उन्हें दु:ख पहुँचा है?

'जब अपने जीवन में हम किसी पुण्यात्मा को खो देते हैं, तब दु:ख होता है न...?' अविनाश ने बहुत अनमने भाव से मौसमी की ओर देखते हुए कहा। 'मैं कुछ समझी नहीं, आखिर आप किस पुण्यात्मा की बात कर रहे हैं', मौसमी ने अचरज भरी निगाह से अविनाश को देखा।

'थे एक पुण्यात्मा, रात में उनका देहावसान हो गया। अभी-अभी एक संदेश आया है, जिसे पढ़कर ही मेरी आँखें भर आयी थीं', अविनाश ने रुँधे गले से कहा। 'आप किसकी बात कर रहे हैं', मौसमी सब कुछ जानने के लिए उतावली सी हो गयी थी। अविनाश ने कहा, 'देबू गुरुजी की बात कर रहा हूँ मैं, जिनकी देख-रेख में मेरा

दूर मंदिरों से घंटियों के बजने की आवाजें आ रही थीं। उनकी टैक्सी मंदिर के सामने जाकर रुकी। दोनों उतरे और मंदिर के गर्भगृह में जाकर पुण्यात्मा की आत्मा की शांति के लिए ईश्वर से प्रार्थना की। जब वे लौटने लगे तो पुजारी ने प्रसाद देते हुए कहा, 'बेटा तुम जिस कामना से यहाँ आये हो, ईश्वर तुम्हारी वह कामना जरूर पूरी करेंगे।' लौटते हुए उनकी टैक्सी मंदिर से दूर जा चुकी थी, फिर भी मंदिर में बजने वाली घंटियों की आवाजें उनके कानों में गूँजती रहीं, मानों कोई पुण्यात्मा उनके साथ-साथ चल रही हो।

बचपन बीता। माँ के गुजर जाने के बाद मेरे पालन-पोषण में पिताजी को परेशानी होने लगी। वे कतई मुझे सौतेली माँ के भरोसे छोड़ना नहीं चाहते थे। इसलिए उन्होंने दूसरी शादी का फैसला भी टाल दिया। वे मजबूरी में ऑफिस जाते समय मुझे घर में अकेले छोड़ जाते थे। धीरे-धीरे मैं बिगड़ने लगा था। बुरी आदतों का शिकार होते देख पिताजी को मेरी चिंता सताने लगी। एक दिन देवू गुरुजी से उन्होंने अपनी परेशानियों का जिक्र किया। देवू गुरुजी बहुत संवेदनशील व्यक्ति थे। वे दया एवं करुणा के प्रतिमूर्ति थे। उन्होंने पिताजी से कहा कि दिन में जब मैं स्कूल से घर लौटूँ तो बाकी खाली समय में, मैं उनके संरक्षण में रहकर पढ़ाई करूँ। पिताजी ने ट्यूशन के बदले कुछ पैसे देने की बात कही तो वे पूरी तरह टाल गए। लोभ-लालच तो उनके भीतर था ही नहीं। मैं स्कूल से लौटता फिर देवू गुरूजी के घर चला जाता। वे भी अकेले ही थे। उन्होंने शादी नहीं की थी। वे मुझे कुछ सवाल दे देते और फिर अपने काम में जुट जाते थे। जब वे घर से बाहर निकलते तो, मैं उनके कुरते की जेब टटोला करता था, मुझे पहले ही दिन पाँच का एक नोट मिला, जिसे मैंने अपने पास रख लिया था। मैं लगातार कई दिनों तक यही करता रहा। मुझे आश्चर्य होता था कि जेब से हमेशा पाँच का एक नोट मुझे मिलता ही था। देवू गुरुजी को यह बात मालूम हो चुकी थी या नहीं, मैं उस वक्त नहीं जान पाया था। पर बारह वर्ष की उम्र में मेरा दिमाग कई बार ठनका था कि आखिर जेब में पाँच का नोट मुझे रोज क्यों मिल जाता है, क्या देवू गुरुजी को पैसे गायब हो जाने का अंदेशा अब तक नहीं हो सका है? देवू गुरुजी ने मुझसे कभी नहीं कहा कि मैंने चोरी की है। पर कुछ हद तक मुझे लगने लगा था कि गुरुजी को मेरी बुरी आदतों का पूर्वाभास हो चुका है।

एक दिन गुरुजी इसी तरह मुझे विज्ञान के कुछ प्रश्नों के उत्तर लिखने को दिए और कमरे से बाहर झाड़ू लगाते रहे। मैं अपनी आदत के मुताबिक काम छोड़कर फिर कुरते की जेब टटोलने लगा, पर उस दिन पहली बार मुझे पाँच का नोट नहीं मिला। मैं बार-बार जेब टटोलने की कोशिश करता रहा कि पाँच का नोट मुझे मिल जाए। इसी दरम्यान गुरुजी का कमरे में आना हुआ। उन्होंने मुझे उनके कुरते की जेब टटोलते देखकर इतना भर कहा कि बेटे पाँच का नोट मैं आज कुरते की जेब में रखना भूल गया, तुम्हें जरूरत हो तो मैं तुम्हें दूँगा। उनका इतना भर कहना था कि मेरी घिग्घी बंध गयी, मुझे काटो तो खून नहीं। मैं जान गया कि उन्हें मेरी सभी बुरी आदतों की जानकारी है।'

उन्होंने फिर पूछा, 'बेटे आखिर इन पाँच रुपयों का तुम करते क्या हो?' अब सच बताने के सिवा मेरे पास और कोई चारा न था। उस उम्र में भी मेरे भीतर प्रायश्चित्त का एक भाव पैदा हो गया। आखिर मैंने अपने ही गुरु के पैसे चुराए थे।'

'मैं इन पैसों से सिगरेट खरीदता हूँ और छिपकर उन्हें पीता हूँ।' मैं सब कुछ सच-सच बोल गया, वे उस वक्त बहुत चिंतित लग रहे थे, फिर भी मेरी बातें सुनकर वे बिलकुल नाराज नहीं हुए। उन्होंने पूछा, 'क्या पिताजी से भी तुम्हें पैसे मिलते हैं?'

मैंने कहा, 'नहीं! वे मेरे लिए खाने-पीने की पर्याप्त वस्तुएँ खरीद जाते हैं, पर पैसे नहीं देते।' मेरी बातें सुनकर उनकी चिंता थोड़ी कम होती दिखी। उन्होंने कभी भी मेरी बुरी आदतों की शिकायत पिताजी से नहीं की। वे जानते थे कि अगर उन्होंने ऐसा किया तो पिताजी को गहरा दु:ख पहुँचेगा। उन्होंने प्यार से अपने पास बैठने के लिए कहा। वे भी जमीन पर बिछी चटाई पर बैठे हुए थे। हम दोनों एक दूसरे का चेहरा देख रहे थे। वे कुछ चिंतित लग रहे थे। उन्होंने पूछा, 'बेटा क्या तुम अपनी माँ से बहुत प्यार करते थे?'

मैंने कहा, 'हाँ गुरुजी!' उन्होंने फिर पूछा, 'क्या तुम अपने पिता से भी बहुत प्यार करते हो?' मेरा उत्तर था, 'हाँ गुरुजी!' उनका अगल सवाल था 'क्या तुम मुझसे भी प्यार करते हो?' मेरा उत्तर था, 'बहुत गुरुजी!' उन्होंने तत्काल पूछा, 'बेटा क्या तुम मुझे या अपने पिता को दु:ख पहुँचाना चाहोगे?' मेरे मुँह से तत्काल निकल पड़ा, 'बिल्कुल नहीं गुरुजी?'

उन्होंने चिंतित मुद्रा में कहा, 'यह तभी संभव है, जब तुम अपनी सारी बुरी आदतों को छोड़कर मेरे रास्ते पर चलोगे' और उस दिन से मैं वही करने लगा और मेरी बुरी आदतें धीरे-धीरे

छूटती चली गयीं। मुझे तो प्रायश्चित्त करना था, मेरे हाथों गुरुजी के पैसे चुराने का एक गंभीर अपराध हो चुका था, जो हमेशा मेरे मन को कचोटता रहा। आज अचानक इतने सालों बाद उनकी मृत्यु की खबर पढ़कर मुझे वह घटना फिर से याद हो आयी, जिसे मैं भूल चुका था। आज उसकी याद आते ही मुझे फिर से लगने लगा कि मेरा प्रायश्चित्त पूरा हो सका या नहीं। उस पुण्यात्मा ने मेरा जीवन बदला है, अन्यथा मैं किसी गली-कूचे में नशे की हालत में पड़ा हुआ मिलता।

मौसमी बहुत ध्यान से अपने पति की बातें सुनती रही। उसकी आँखें भर आयी थीं। उसने भी उस पुण्यात्मा को याद किया, जिससे कभी वह मिली ही नहीं थी। उस पुण्यात्मा के प्रति वह कृतज्ञता से भर उठी थी।

दूर मंदिरों से घंटियों के बजने की आवाजें आ रही थीं। उनकी टैक्सी मंदिर के सामने जाकर रुकी। दोनों उतरे और मंदिर के गर्भगृह में जाकर पुण्यात्मा की आत्मा की शांति के लिए ईश्वर से प्रार्थना की। जब वे लौटने लगे तो पुजारी ने प्रसाद देते हुए कहा, 'बेटा तुम जिस कामना से यहाँ आये हो, ईश्वर तुम्हारी वह कामना जरूर पूरी करेंगे।' लौटते हुए उनकी टैक्सी मंदिर से दूर जा चुकी थी, फिर भी मंदिर में बजने वाली घंटियों की आवाजें उनके कानों में गूँजती रहीं, मानो कोई पुण्यात्मा उनके साथ-साथ चल रही हो।

- गायत्री मंदिर के पीछे
बोईरदादर
रायगढ़ (छत्तीस गढ़) - 496 001
मोबाइल: +91 9752685148

सौदेबाज

- श्री कृष्ण शर्मा -

लगभग एक माह के उपरांत जब मैं 'चेतना टी हाऊस' में एक कप चाय पीने बैठा तो वहाँ मैंने पुराने लड़के की जगह एक नये नौकर को काम करते देखा। छोटी उम्र का वह पहले वाला लड़का मुझसे खासा घुला-मिला हुआ था। वह लड़का बेहद उच्छृंखल तथा मर्जी का मालिक भले ही था, लेकिन अपना काम वह बड़ी मुस्तैदी से किया करता था।

तेईस-चौबीस वर्षीय यह नया युवक मुझे गंभीर प्रकृति का, लेकिन परिश्रमी लगा। फिर भी यह देखकर मुझे आश्चर्य हुआ कि दूकान के मालिक दीवानचंद का व्यवहार इस युवक के प्रति बड़ा रुखा था। बात-बात पर वह उसे झिड़क रहा था, 'अबे गधे, उसे छोड़ो, अब क्या वहीं खड़े रहोगे...' आदि-आदि।

मुझे याद आया कि पहले लड़के के प्रति मालिक का व्यवहार बड़ा लाड़-प्यार वाला होता था। उसे अपने बच्चों की तरह लाड़ करना, उसकी मिन्नतें-मनुहार कर लेना आदि कुछ ऐसी बातें थीं, जो चाय सिप करते हुए मेरे मन में घूम रही थीं। रहा न गया तो मैंने समीप ही काउंटर के पीछे खड़े दीवानचंद से दोनों लड़कों के प्रति भिन्न-भिन्न व्यवहार का कारण पूछ ही लिया।

भेद भरी एक मुस्कुराहट दीवानचंद के होंठों पर फैल गई और उसने कहा, 'यदि हम उस पहले वाले लड़के के नाज-नखरे न उठाया करते तो वह दो साल तक हमारे पास कभी न टिकता।'

'लेकिन इस तरह तंग आकर यह नया युवक भी तो काम छोड़कर कहीं और जा सकता है न?' मैंने शंका व्यक्त की।

'अरे साहब, लगता है असल बात सुने बिना आप छोड़ेंगे नहीं।' हँसते हुए दीवानचंद ने बात आगे बढ़ाई, 'बात यह है कि उस पहले वाले लड़के को हम दो वक्त सादा दाल-रोटी के अलावा पंद्रह सौ रुपये प्रति महीना देकर रोजाना सुबह छः बजे से रात दस बजे तक काम लेते थे... यह नया नौकर हमसे रोटी-कपड़ा तो कुछ नहीं लेता, लेकिन इसका मासिक वेतन पूरे चार हजार रुपये हैं। और, इस वेतन पर काम करनेवाले अनेक लोग हमें बड़ी आसानी से मिल सकते हैं...।

बात अच्छी तरह से मेरी समझ में आ चुकी थी। चाय का आखिरी घूँट भरने के लिए मैंने कप उठाया तो पता चला कि कप जाने कब का खाली पड़ा था।

- 152/119, पक्की ढक्की
जम्मू (जे एंड के)-180001
मोबाइल: +91 9419286258

लेख

एक मौन सामाजिक क्रांति

- श्री सुभाष सेतिया -

स्वच्छ रहने की आवश्यकता जीवन का अभिन्न हिस्सा है। किन्तु इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि अपने शरीर, घर और परिवार को स्वच्छ रखो की आवश्यकता को अतीत में हमारे देश में अपेक्षित महत्व नहीं दिया गया। मल-मूत्र से निपटना हमारी दैनिक प्रक्रिया का उतना ही जरूरी हिस्सा है, जितना खाना, पीना और सोना। किंतु हम अपनी समूची लोक परंपरा, साहित्य, इतिहास और पौराणिक ग्रंथों पर नजर डालें, तो पाते हैं कि पूर्व में शौच का उल्लेख तक सामाजिक निषेध था। हमारे महाकाव्यों, पौराणिक कथाओं और लोक साहित्य में जीवन की अन्य गतिविधियों का तो उल्लेख है, लेकिन शौच संबंधी गतिविधियों की चर्चा परोक्ष रूप में भी नहीं मिलता। इस नैतिक एवं सामाजिक वर्जना का प्रभाव यह हुआ कि भारतीय समाज में व्यावहारिक स्तर पर शौच संबंधी स्वच्छता की लगातार अनदेखी होती रही और पूरा समाज विशेषकर महिलाएँ और बच्चे कष्ट झेलते रहे। इस स्तर पर महिलाओं की दशा विशेष रूप से शोचनीय रही और आज भी है, क्योंकि इसके साथ लाज-शर्म भी जुड़ी हुई है।

शौच प्रबंधन का एक और दुर्भाग्यपूर्ण पहलू यह है कि इस दिशा में जो प्रयास हुए भी, उनमें साफ-सफाई का दायित्व एक जाति विशेष तक सीमित कर दिया गया। परिणाम यह हुआ कि घृणा और जुगुप्सा की जो भावना स्वच्छता और मल-मूत्र विसर्जन के बारे में थी, घृणा और हिकारत का वही भाव शौच प्रबंधन का दायित्व संभालने वाले समुदाय के प्रति भी पनपने लगा। धीरे-धीरे यह मानसिक दुराव सामाजिक अलगाव में बदल गया और समाज का शेष वर्ग स्वच्छता का काम करने वाले समुदाय को अस्पृश्य मानने लगा। यह अस्पृश्यता ऐसा अमानवीय सामाजिक कलंक बना कि सारी दुनिया के सामने भारत का सिर झुका दिया।

मध्यकाल में अनेक समाज सुधारकों ने इस बुराई की निंदा की और समाज को इससे छुटकारा दिलाने के उपदेश दिए, किंतु इस विषय को गंभीरता से नहीं उठाया गया। गांधी जी ऐसे पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने न केवल इसे पूरी गंभीरता के साथ सार्वजनिक रूप से उठाया, बल्कि इसे स्वतंत्रता आंदोलन के कार्यक्रमों में शामिल किया। स्वच्छता का कर्म छोटा काम नहीं है, यह संदेश देने के लिए वे आश्रम में अपना और आश्रमवासियों का पखाना स्वयं साफ करते थे। आजादी के बाद अस्पृश्यता उन्मूलन और सिर पर मैला ढोने की प्रथा समाप्त करने के लिए कानून बने, लेकिन सामाजिक स्वीकृति व समर्थन के अभाव में इसे अपेक्षित सफलता नहीं मिली।

हालांकि इसी दिशा में पहल करते हुए सरकार ने निर्मल ग्राम योजना शुरु की है, जिसके अंतर्गत गाँवों में आधुनिक शौचालयों के निर्माण के लिए वित्तीय सहायता दी जाती है। प्रचार-प्रसार के माध्यमों से भी इस योजना को लोकप्रिय बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं। शौच प्रबंधन में लगे लोगों, विशेषकर महिलाओं को रोजगार के लिए तरह-तरह के शिल्प का प्रशिक्षण दिया जाता है, ताकि वे इस कलंकित काम से छुटकारा पा सकें और सम्मान के साथ जीवन जी सकें। प्रसिद्ध अभिनेत्री विद्या बालन इस अभियान की ब्रांड एम्बेसडर हैं, जो ग्रामीण महिलाओं को शौच का महत्व समझाने का प्रयास कर रही हैं। सरकारों की विभिन्न परियोजनाओं की मदद से मैला सफाई की प्रथा कम तो हो रही है, लेकिन समाज के सहयोग एवं समर्थन के बिना इसे दूर कर पाना असंभव है।

इस संदर्भ में हमारे देश में एक ऐसी संस्था सक्रिय है, जो मैला ढोने की प्रथा समाप्त करके तथा इस काम से जुड़े लोगों में बसी हीनभावना और गरीबी को दूर करके एक तरह से सामाजिक क्रांति लाने का प्रयास कर रही है। इस संगठन का नाम 'सुलभ इंटरनेशनल' है, जो पिछले चार दशकों से भी अधिक समय से विभिन्न तरह के उपाय करके स्वच्छता अभियान के माध्यम से समाज को बदलने की दिशा में कार्यरत है।

यह संयोगमात्र नहीं है कि 'सुलभ शौचालय' आंदोलन के संस्थापक डॉक्टर बिंदेश्वर पाठक ने इस अभियान की शुरुआत 13 मार्च 1970 को गांधी जी की प्रेरणा से ही की थी। 1968 में वे एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में 'बिहार गांधी जन्म शताब्दी समारोह समिति' से जुड़े। उन्हें मेहतरों के संबंध में गांधी जी के सपने को साकार करने के उपायों पर काम करने का दायित्व मिला। इसी दौरान उनके मन में 'सुलभ' जैसा आंदोलन खड़ा करने का विचार आया। डॉ बिंदेश्वर पाठक द्वारा बिहार में एक कमरे से शुरु किया गया यह अभियान इस समय एक विश्वव्यापी संगठन का रूप ले चुका है और शौचालय जैसे वर्जनागत विषय के माध्यम से धीरे-धीरे भारतीय समाज में बदलाव लाने में मददगार सिद्ध हो रहा है। सुलभ आंदोलन ने देश के गाँवों व कस्बों में इस्तेमाल हो सकने वाले नए नए प्रकार के शौचालय विकसित

'सुलभ इंटरनेशनल' का अभियान शौचालयों की तकनीक विकसित करने, उनका निर्माण करने तथा उनके प्रयोग को लोकप्रिय बनाने तक सीमित नहीं है। जिन लोगों को मैला ढोने के कलंक से छुटकारा मिलता है, उन्हें यूँ ही बेरोजगार नहीं छोड़ दिया जाता। उन्हें तरह-तरह के शिल्पों का प्रशिक्षण भी दिया जाता है, ताकि वे आत्मनिर्भर बनें और सम्मान के साथ जी सकें। मुक्त कराई गई महिला मेहतरों के लिए राजस्थान के अलवर व टोंक में प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित हैं, जहाँ अचार व पापड़ बनाने, सिलाई, कसीदाकारी और ब्यूटीशियन जैसे व्यवसाय सिखाए जाते हैं। उनके बच्चों के लिए स्कूल खोले गए हैं, जहाँ वे शिक्षा ग्रहण करके विभिन्न व्यवसायों में ऊँचे पदों पर काम करने में सक्षम बनते हैं।

करके खुले में शौच जाने की अशिष्ट तथा हानिकर प्रथा को दूर करने का प्रयास किया है और साथ ही समाज के एक उपेक्षित वर्ग को सिर पर मैला ढोने के अभिशाप से मुक्ति दिलाकर और शिक्षित व आत्मनिर्भर बनाकर उन्हें समाज में सिर ऊँचा करके चलने लायक बना दिया है। यह मौन क्रांति किसी तरह की नारेबाजी और सैद्धांतिक वादों व विवादों में उलझे बगैर केवल जमीन पर काम करके लाई जा रही है।

डॉ पाठक ने जिस समय शौचालयों के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन का स्वप्न देखा था, उस समय सैप्टिक टैंक व्यवस्था प्रचलित थी, जो अस्वच्छ और पाखाना साफ करने वालों के स्वास्थ्य के लिए खतरनाक थी। डॉ पाठक स्वयं कहते हैं, इन दिक्कतों पर काबू पाने के लिए मैंने 'टू पिट पोर फ्लश' के 'पोस्ट टॉयलेट' का आविष्कार किया और उसे सुलभ शौचालय का नाम दिया। इस नए डिजाइन के शौचालय की सफाई करना आसान है और पानी का कम उपयोग होता है। इसकी पहली खासियत यह भी है कि हर वर्ग इसे बनवाकर इस्तेमाल कर सकते हैं। यह काफी सस्ती है। दूसरी खासियत यह है कि इसमें जमा हुए मानव मल से खाद बनाई जा सकती है, जिसे उन्होंने 'कचरे से धन' का नाम दिया। आज 'सुलभ शौचालय' पूरे देश में जाना पहचाना नाम है और देश भर के रेलवे स्टेशनों, बस अड्डों, पर्यटन स्थलों, धार्मिक स्थलों, बाजारों, मालों और विभिन्न सामुदायिक स्थलों पर 'सुलभ शौचालय' मिल जाते हैं। इसका एक विशाल म्यूजियम भी है, जहाँ इसकी तकनीक का अध्ययन करने के उद्देश्य से देश-विदेश के विद्वान व शोधछात्र और पर्यटक आकर इस चमत्कार को देखते और महसूस करते हैं।

'सुलभ इंटरनेशनल' का अभियान शौचालयों की तकनीक विकसित करने, उनका निर्माण करने तथा उनके प्रयोग को लोकप्रिय बनाने तक सीमित नहीं है। जिन लोगों को मैला ढोने के कलंक से छुटकारा मिलता है, उन्हें यूँ ही बेरोजगार नहीं छोड़ दिया जाता। उन्हें तरह-तरह के शिल्पों का प्रशिक्षण भी दिया जाता है, ताकि वे आत्मनिर्भर बनें और सम्मान के साथ जी सकें। मुक्त कराई गई महिला मेहतरों के लिए राजस्थान के अलवर व टोंक में प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित हैं, जहाँ अचार व पापड़ बनाने, सिलाई, कसीदाकारी और ब्यूटीशियन जैसे व्यवसाय सिखाए जाते हैं। उनके बच्चों के लिए स्कूल खोले गए हैं, जहाँ वे शिक्षा ग्रहण करके विभिन्न व्यवसायों में ऊँचे पदों पर काम करने में सक्षम बनते हैं।

जल संरक्षण के क्षेत्र में भी 'सुलभ इंटरनेशनल' ने कई प्रयोग किए हैं, जिन्हें देश-विदेश के जल विशेषज्ञों ने सराहा है। इस प्रयोग के लिए डॉ पाठक को अनेक अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार मिले हैं। 'सुलभ इंटरनेशनल' ने बायोगैस के प्लांट भी विकसित किए हैं। स्वच्छता और जल शोधन एवं प्रबंधन से जुड़े अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के संस्थानों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में डॉ पाठक को इन विषयों पर व्याख्यान देने के लिए बुलाया जाता है। रेडियो, टेलीविजन और पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से वे 'सुलभ शौचालय' का तंत्र और मंत्र जन-जन तक पहुँचाते हैं। जमीनी स्तर पर सैकड़ों परियोजनाएँ चलाने के कारण डॉ पाठक स्वच्छता तथा जल संरक्षण के विशेषज्ञ माने जाते हैं और इन पर होने वाले विचार-मंथन में उनकी उपस्थिति को सम्मानजनक तथा उपयोगी माना जाता है।

उनकी पहल से राजस्थान के अलवर और टोंक जिलों में सभी महिला मेहतरों ने सिर पर मैला ढोने का अपमानजनक काम छोड़ दिया है। डॉ पाठक महिलाओं को संसद भवन, धार्मिक स्थलों, मंदिरों और सामाजिक संस्थाओं में ले जाते हैं, जहाँ उनका आदर किया जाता है और कई स्थानों पर सवर्ण जाति के लोगों के साथ बैठकर उन्हें भोजन कराया जाता है। इस प्रकार उन्हें समाज के सामान्य अंग होने का एहसास कराया जाता है। सामाजिक समरसता तथा सुधार की दिशा में 'सुलभ इंटरनेशनल' के प्रयासों की विश्वसनीयता पर देश के सर्वोच्च न्यायालय ने भी अपनी मुहर लगा दी है। सुप्रीम कोर्ट के सामने वृंदावन की विधवाओं को दयनीय स्थिति से उबारने की जनयाचिका आई तो उसने 'सुलभ इंटरनेशनल' संगठन की क्षमता और विश्वसनीयता पर भरोसा जताया और उसे वृंदावन के चार आश्रमों में विधवाओं की सहायता का दायित्व सौंपा, जिसे 'सुलभ' ने सहर्ष स्वीकार कर लिया और उसे सफलता के साथ अंजाम भी दे रहा है। 'सुलभ' के हस्तक्षेप के बाद इन आश्रमों की विधवाओं का दैनिक जीवन तो सुखमय हुआ ही है, शहर में उनकी इज्जत भी होने लगी है। 'सुलभ' ने अपने गाँव में शौचालय न होने के कारण ससुराल में रहने से इंकार करने वाली लड़की 'प्रियंका भारती' को सम्मानित करके समाज में इस विषय पर जागृति फैलाने की कोशिश की। उत्तराखंड में प्राकृतिक आपदा से ध्वस्त उस गाँव को भी सुलभ ने गोद लिया है, जहाँ केवल विधवाएँ ही बची हैं।

'सुलभ इंटरनेशनल' की मौन सामाजिक क्रांति का यह विशाल अभियान बिना किसी सरकारी मदद से चल रहा है। इसने ऐसी कार्यप्रणाली अपनाई है कि इसे कभी भी वित्तीय विवशता के कारण अपने उद्देश्यों या कार्यक्रमों से कोई समझौता नहीं करना पड़ता। सुलभ के सभी शौचालयों के उपयोग के लिए शुल्क लिया जाता है, जो इसके बढ़िया रखरखाव के साथ-साथ संगठन की अन्य गतिविधियों का खर्च चलाने के काम आता है। सच तो यह है कि हमारे देश में 'सुलभ शौचालय' आंदोलन अन्य स्वयंसेवी संस्थाओं के लिए प्रेरणास्रोत है।

- सी-302, हिंद अपार्टमेंट्स
प्लाट नं.12, सेक्टर-5
द्वारका, नई दिल्ली-110075
ई-मेल: setia_subhash@yahoo.co.in

मानक

आओ भाषा सीखें

विश्व में प्रतिवर्ष **25** दिसंबर को 'क्रिसमस' का त्योहार धूमधाम से मनाया जाता है। इसी संदर्भ में 'सुगंध' के इस स्तंभ में निम्नलिखित वार्तालाप प्रस्तुत किया गया है। आशा है कि पाठकों को इस प्रयास से लाभ होगा।

पुष्पा : हाय सुधा! लगता है 'क्रिसमस' मनाकर गाँव से आ रही हो।

పుష్పా : హాయ్ సుధా! లగ్‌తా హై 'క్రిస్‌మస్' మనాకర్ గాఁవ్ సే ఆ రహీ హో.

పుష్పా : హాయ్ సుధా! 'క్రిస్‌మస్' జరుపుకొని ఊరినుంచి వస్తున్నట్టున్నావు.

पुष्पा : हाय सुधा! 'क्रिसमस' जरुपुकोनि ऊरिनुंचि वस्तुन्नट्टुन्नावु।

सुधा : हाँ पुष्पा! हमारे सभी रिश्तेदार गाँव में ही हैं और इसी मौके पर हम लोग गाँव में इकट्ठे होते हैं।

సుధా : హాఁ పుష్పా! హమారే సభీ రిష్తేదార్ గాఁవ్ మేఁ హీ హైఁ ఔర్ ఇసీ మౌకే పర్ హమ్ లోగ్ గాఁవ్ మే ఇకట్ఠే హోతే హైఁ.

సుధా : అవును పుష్పా! మా చుట్టాలందరూ ఊర్లోనే ఉన్నారు, ఇంకా మేమందరం ఈ సందర్భంలోనే కలుస్తాం.

सुधा : अवुनु पुष्पा! मा चुट्टालंदरू ऊर्लोने उन्नारु, इंका मेमंदरम् ई संदर्भम्‌लोने कलुस्ताम्।

पुष्पा : अच्छा... तब तो दफ्तर से छुट्टी लेनी पड़ती होगी?

పుష్పా : అచ్ఛా... తబ్ తో దఫ్తర్ సే ఛుట్టీ లేనీ పడ్‌తీ హోగీ?

పుష్పా : అయితే ఆఫీసుకు లీవ్ పెట్టవలసి వస్తుంది కదా?

पुष्पा : अइते आफीसुकु लीव पेट्टवलसि वस्तुंदि कदा?

सुधा : हाँ यार! उस समय तो बच्चों की भी छुट्टियाँ रहती हैं। वे भी नानी के साथ क्रिसमस मनाना चाहते हैं।

సుధా : హాఁ యార్! ఉస్ సమయ్ తో బచ్చోఁ కీ భీ చుట్టియాఁ రహ్‌తీ హైఁ. వే భీ నానీ కే సాథ్ క్రిస్‌మస్ మనానా చాహ్‌తే హైఁ.

సుధా : అవును, ఇలాంటప్పుడు పిల్లలకు సెలవులు ఉంటాయి. వాళ్ళకి కూడా అమ్మమ్మతో క్రిస్‌మస్ జరుపుకోవడం ఇష్టం.

सुधा : अवुनु, इलांटप्पुडु पिल्ललकु सेलवुलु उंटायि। वाल्लकि कूडा अम्मम्मतो क्रिसमस जरुपुकोवडम् इष्टम्।

पुष्पा : यह तो अच्छी बात है, पर ये तो बताओ कि अबकी बार त्योहार कैसे मनाया?

పుష్పా : యహ్ తో అచ్ఛీ బాత్ హై, పర్ యే తో బతావో కి అబ్ కీ బార్ త్యోహార్ కైసే మనాయా?

పుష్పా : అలాగా, మరి ఈ సారి పండుగ ఎలా జరుపుకున్నావు?

पुष्पा : अलागा, मरि ई सारि पंडुग एला जरुपुकुन्नावु?

सुधा : अच्छा से मनाया पुष्पा! वैसे तो तैयारी हफ्ते भर पहले ही शुरू हो जाती है, लेकिन **24** व **25** दिसंबर को अधिक उत्साह रहता है।

సుధా : అచ్ఛా సే మనాయా పుష్పా! వైసే తో తైయ్యారీ హఫ్తే భర్ పహ్‌లే హీ షురూ హో జాతీ హై, లేకిన్ 24 వ 25 దిసంబర్ కో అధిక్ ఉత్సాహ్ రహ్‌తా హై.

సుధా : బాగా జరుపుకున్నాం పుష్పా! మామూలుగా ఏర్పాట్లు వారం రోజుల ముందు నుండి మొదలవుతాయి, కాని 24 మరియు 25 డిసెంబరు న హడావిడి ఎక్కువగా ఉంటుంది.

सुधा : बागा जरुपुकुन्नाम् पुष्पा! मामूलुगा एर्पाट्लु वारम् रोजुल मुंदु नुंडि मोदलवुतायि, कानि **24** मरियु **25** डिसंबर न हडाविडि एक्कुवगा उंटुंदि।

पुष्पा : हाँ... मैंने देखा है। लोग बड़ी श्रद्धा से इस त्योहार को मनाते हैं।

పుష్పా : హాఁ... మైనే దేఖా హై. లోగ్ బడీ శ్రద్ధా సే యహ్ త్యోహార్ మనాతే హై.

పుష్పా : అవును.... నాకు తెలుసు. జనం చాలా శ్రద్ధగా ఈ పండుగ జరుపుకుంటారు.

पुष्पा : अवुनु... नाकु तेलुसु। जनम् चाला श्रद्धगा ई पंडुग जरुपुकुंटारु।

सुधा : यही नहीं... क्रिसमस ट्री लगाकर उसे भी अच्छी तरह सजाते हैं।

సుధా : యహీ నహీఁ... క్రిస్‌మస్ ట్రీ లగాకర్ ఉసే భీ అచ్ఛీ తరహ్ సజాతే హై.

సుధా : అంతే కాదు... క్రిస్‌మస్ ట్రీ పెట్టి దాన్ని కూడా బాగా తయారు చేస్తారు.

सुधा : अंते कादु... क्रिसमस ट्री पेट्टि दान्नि कूडा बागा तयारु चेस्तारु।

पुष्पा : क्रिसमस ट्री क्यों लगाया जाता है?

పుష్పా : క్రిస్‌మస్ ట్రీ క్యోం లగాయా జాతా హై?

పుష్పా : క్రిస్‌మస్ ట్రీ ఎందుకు పెడతారు?

पुष्पा : क्रिसमस ट्री एंदुकु पेडतारु?

सुधा : इसके बारे में **2, 3** कहानियाँ प्रचलित हैं।

సుధా : ఇస్‌కే బారే మేఁ 2, 3 కహానియాఁ ప్రచలిత్ హై.

సుధా : దీని గురించి 2, 3 కథలు ప్రచారంలో ఉన్నాయి.

सुधा : दीनि गुरिंचि **2, 3** कथलु प्रचारंलो उन्नायि।

पुष्पा : मैंने सुना है कि यह ट्री फर के पौधे या उसकी शाखा से बनाया जाता है।

పుష్పా : మైఁ నే సునా హై కి యహ్ ట్రీ ఫర్ కే పౌధే యా ఉస్‌కే శాఖా సే బనాయా జాతా హై.

పుష్పా : నేను ఈ క్రిస్‌మస్ ట్రీ ఫర్ మొక్కతో లేదా దాని శాఖతో తయారుచేస్తారు అని విన్నాను.

पुष्पा : नेनु ई क्रिसमस ट्री फर मोक्कतो लेदा दानि शाखतो तयारुचेस्तारु अनि विन्नानु।

सुधा : कहा जाता है कि इस त्योहार के दिन एक छोटा सा बच्चा रास्ता भटक जाता है। इतने में उसे एक झोंपड़ी दिखाई देती है।

సుధా : కహా జాతా హై కి ఇస్ త్యోహార్ కే దిన్ ఏక్ ఛోటా సా బచ్చా రాస్తా భటక్ జాతా హై. ఇత్‌నే మేఁ ఉసే ఏక్ ఝోంపడీ దిఖాయీ దేతీ హై.

సుధా : ఈ పండుగ రోజున ఒక చిన్న పిల్లవాడు దారి తప్పిపోతాడు. ఇంతలో అతనికి ఒక గుడిసె కనిపిస్తుంది.

सुधा : ई पंडुग रोजुन ओक चिन्न पिल्लवाडु दारि तप्पिपोताडु। इंतलो अतनिकि ओक गुडिसे कनिपिस्तुंदि।

पुष्पा : फिर क्या होता है?

పుష్పా : ఫిర్ క్యా హోతా హై?

పుష్పా : ఆ తరువాత ఏం జరుగుతుంది?

पुष्पा : आ तरुवात एम् जरुगुतुंदि?

सुधा : उस झोंपड़ी में एक लकड़हारा रहता है, जो उसे अपनी झोंपड़ी में ले जाकर भर पेट खाना खिलाता है।

సుధా : ఉస్ ఝోంపడీ మేఁ ఏక్ లకడ్‌హారా రహ్‌తా హై, జో ఉసే అప్‌నీ ఝోంపడీ మేఁ లే జాకర్ భర్ పేట్ ఖానా ఖిలాతా హై.

సుధా : ఆ గుడిసెలో ఒక కట్టెలు కొట్టుకునేవాడు ఉంటాడు. అతడు ఆ పిల్లవాడిని తన గుడిసెలోనికి తీసుకువెళ్లి కడుపునిండా అన్నం పెడతాడు.

सुधा : आ गुडिसेलो ओक कट्टेलु कोट्टुकुनेवाडु उंटाडु। अतडु आ पिल्लवाडिनि तन गुडिसेलोनिकि तीसुकुवेल्लि अतनिकि कडुपुनिंडा अन्नम् पेडताडु।

पुष्पा : आगे क्या होता है?

పుష్పా : ఆగే క్యా హోతా హై?

పుష్పా : ఆ తరువాత ఏం జరుగుతుంది?

पुष्पा : आ तरुवात एम् जरुगुतुंदि?

सुधा : सुबह जब वह लकड़हारा जगता है तो उसे बालक यीशु का दर्शन होता है और जाते वक्त यीशु उसे फर का टुकड़ा देते हैं।

సుధా : సుబహ్ జబ్ వహ్ లకడ్‌హారా జగ్‌తా హై తో ఉసే బాలక్ యీషు కా దర్శన్ హోతా హై ఔర్ జాతే వక్త్ యీషు ఉసే ఫర్ కా టుక్‌డా దేతే హైఁ.

సుధా : ఉదయం ఆ కట్టెలు కొట్టుకునేవాడు లేచి చూస్తే అతనికి ఏసు ప్రభు దర్శనం కలుగుతుంది, ఇంకా ఏసు ప్రభు వెళ్ళిపోయేటప్పుడు అతనికి ఫర్ ముక్క ఇచ్చి వెళ్ళిపోతారు.

सुधा : उदयम् आ कट्टेलु कोट्टुकुनेवाडु लेचि चूस्ते अतनिकि एसु प्रभु दर्शनम् कलुगुतुंदि, इंका एसु प्रभु वेल्लिपोयेटप्पुडु अतनिकि फर मुक्क इच्चि वेल्लिपोतारु।

पुष्पा : अच्छा...। मतलब! लोग इसी दिन की याद में क्रिसमस ट्री लगाकर उसमें ईसा मसीहा का दर्शन करते हैं।

పుష్పా : అచ్ఛా.... మతలబ్! లోగ్ ఇసీ దిన్ కీ యాద్ మేఁ క్రిస్‌మస్ ట్రీ లగాకర్ ఉస్‌మేఁ ఈసా మసీహా కా దర్శన్ కర్‌తే హైఁ.

పుష్పా : అలాగా... అంటే ప్రజలు ఈ రోజు జ్ఞాపకార్థం క్రిస్‌మస్ ట్రీ పెట్టి దానిలో ఏసు ప్రభువుని దర్శించుకుంటారు.

पुष्पा : अलागा... अंटे प्रजलु ई रोजु ज्ञापकार्थम् क्रिसमस ट्री पेट्टि दानिलो एसु प्रभुवुनि दर्शिंचुकुंटारु।

सुधा : कहा जाता है कि इंग्लैंड के प्रिंस अल्बर्ट ने वर्ष **1841** में पहली बार क्रिसमस ट्री लगाया था।

సుధా : కహా జాతా హై కి ఇంగ్లైండ్ కే ప్రిన్స్ అల్బర్ట్ నే వర్ష్ **1841** మేఁ పహ్‌లీ బార్ క్రిస్‌మస్ ట్రీ లగాయా థా.

సుధా : ఇంగ్లాండుకు చెందిన ప్రిన్స్ అల్బర్ట్ **1841** వ సంవత్సరంలో మొదటిసారిగా క్రిస్‌మస్ ట్రీ పెట్టాడని అంటారు.

सुधा : इंग्लांडुकु चेंदिन प्रिंस अल्बर्ट **1841** व संवत्सरम्‌लो मोदटिसारिगा क्रिसमस ट्री पेट्टाडनि अंटारु।

पुष्पा : फिर सांटा क्लाज कौन हैं, जो उस दिन आकर बच्चों को इनाम देते हैं।

పుష్పా : ఫిర్ సాంటా క్లాజ్ కౌన్ హైఁ, జో ఉస్ దిన్ ఆకర్ బచ్చోఁ కో ఇనామ్ దేతే హైఁ.
పుష్పా : మరి ఆ రోజు వచ్చి పిల్లలకు కానుకలిచ్చే సాంటా క్లాజ్ ఎవరు?
पुष्पा : मरि आ रोजु वच्चि पिल्ललकु कानुकलिच्चे सांटा क्लाज एवरु।
सुधा : लोग मानते हैं कि क्रिसमस से नये वर्ष का शुभारंभ होता है और वर्ष भर लोगों की खुशियों हेतु एशिया के माइनर बिशप सभी को इनाम देते हैं। उन्हीं को सांटा क्लाज माना जाता है।
సుధా : లోగ్ మాన్‌తే హైఁ కి క్రిస్‌మస్ సే నయే వర్ష్ కా శుభారంభ్ హోతా హై ఔర్ వర్ష్ భర్ లోగోఁ కీ ఖుషియోఁ హేతు ఏషియా కే మైనర్ బిషప్ సభీ కో ఇనామ్ దేతే హైఁ. ఉన్హీ కో సాంటా క్లాజ్ మానా జాతా హై.
సుధా : క్రిస్‌మస్ నుంచి కొత్త సంవత్సరం మొదలవుతుందని, ఇంకా సంవత్సరం మొత్తం ప్రజల సంతోషం కొరకు ఆసియా మైనర్ బిషప్ అందరికీ కానుకలు ఇస్తారని ప్రజల నమ్మకం. ఆయననే సాంటా క్లాజ్ అని నమ్ముతారు.
सुधा : क्रिसमस नुंचि कोत्त संवत्सरम् मोदलवुतुंदनि, इंका संवत्सरम् मोत्तम् प्रजल संतोषम् कोरकु आसिया मैनर बिशप अंदरिकी कानुकलु इस्तारनि प्रजल नम्मकम्। आयनने सांटा क्लाज अनि नम्मुतारु।
पुष्पा : सुना है कि क्रिसमस ट्री पर उपहार लटकाये जाते हैं।
పుష్పా : సునా హై కి క్రిస్‌మస్ ట్రీ పర్ ఉపహార్ లట్‌కాయే జాతే హైఁ.
పుష్పా : క్రిస్‌మస్ ట్రీ కి కానుకలు వేలాడదీసి ఉంటాయని విన్నాను.
पुष्पा : क्रिसमस ट्री कि कानुकलु वेलाडदीसि उंटायनि विन्नानु।
सुधा : हाँ वे इनाम गरीबों को देने के लिए लटकाये जाते हैं।
సుధా : హాఁ వే ఇనామ్ గరీబోఁ కో దేనే కే లియే లట్‌కాయే జాతే హైఁ.
సుధా : అవును ఆ కానుకలు పేదవారికి ఇవ్వడానికి వేలాడదీస్తారు.
सुधा : अवुनु आ कानुकलु पेदवारिकि इव्वडानिकि वेलाडदीस्तारु।
पुष्पा : सुधा! तुमने क्रिसमस के बारे में बहुत सारी बातें बताईं। मैं अपने बच्चों को भी यह सारी जानकारी दूँगी।
పుష్పా : సుధా! తుమ్‌నే క్రిస్‌మస్ కే బారే మేఁ బహుత్ సారీ బాతే బతాయీఁ. మైఁ అప్‌నే బచ్చోఁ కో భీ యహ్ సారీ జాన్‌కారీ దూంగీ.
పుష్పా : సుధా! నువ్వు క్రిస్‌మస్ గురించి చాలా విషయాలు చెప్పావు. ఇవన్నీ నేను నా పిల్లలకు కూడా తెలియజేస్తాను.
पुष्पा : सुधा! नुव्वु क्रिसमस गुरिंचि चाला विषयालु चेप्पावु। इवन्नी नेनु ना पिल्ललकु कूडा तेलियजेस्तानु।
सुधा : यार! त्योहार मनाना तो सामान्य बात है।
సుధా : యార్! త్యోహార్ మనానా తో సామాన్య్ బాత్ హై.
సుధా : పండుగ జరుపుకోవడం సామాన్య విషయం.
सुधा : पंडुग जरुपुकोवडम् सामान्य विषयम्।
पुष्पा : लेकिन जब उसकी अहमियत हम समझकर मनाते हैं तो हमें और भी खुशी होती है।
పుష్పా : లేకిన్ జబ్ ఉస్‌కీ అహమియత్ హమ్ సమఝ్‌కర్ మనాతే హైఁ తో హమేఁ ఔర్ భీ ఖుషీ హోతీ హై.
పుష్పా : కాని మనము దాని ప్రాముఖ్యం తెలుసుకొని జరుపుకుంటే మనకి ఇంకా ఆనందంగా ఉంటుంది.
पुष्पा : कानि मनमु दानि प्रामुख्यम् तेलुसुकोनि जरुपुकुंटे मनकि इंका आनंदम्‌गा उंटुंदि।
सुधा : तुम ठीक कहती हो।
సుధా : తుమ్ ఠీక్ కహ్‌తీ హో.
సుధా : అవును.
सुधा : अवुनु।
पुष्पा : अब की बार हम लोग भी क्रिसमस मनाकर गरीब लोगों को ढेर सारे उपहार देंगे।
పుష్పా : అబ్ కీ బార్ హమ్ లోగ్ భీ క్రిస్‌మస్ మనాకర్ గరీబ్ లోగోఁ కో ఢేర్ సారే ఉపహార్ దేంగే.
పుష్పా : ఈసారి మేము కూడా క్రిస్‌మస్ జరుపుకుని పేదవారికి చాలా కానుకలిస్తాం.
पुष्पा : ईसारि मेमु कूडा क्रिसमस जरुपुकुनि पेदवारिकि चाला कानुकलिस्ताम्।
सुधा : ठीक है...
సుధా : ఠీక్ హై...
सुधा : मंचिदि।
सुधा : मंचिदि।

- प्रबंधक (हिंदी), हिंदी कक्ष
राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड
विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र
मोबाइल: +91 9866321109

हास्य कवि सम्मेलन

आर आई एन एल-वी एस पी के हिंदी कक्ष द्वारा **22** दिसंबर, **2013** को शाम के **7.00** बजे उक्कुनगरम क्लब के एम.पी.हॉल में 'हास्य कवि सम्मेलन' आयोजित किया गया। प्रबंधक (हिंदी) श्रीमती जे रमादेवी ने कार्यक्रम में सभी का स्वागत किया। इसमें कानपुर के डॉ कमलेश द्विवेदी, लखीमपुर के जनाब फारुख सरल, इलाहाबाद के श्री श्लेष गौतम, कानपुर के कवि श्री श्रवण शुक्ल, लखनऊ की कवयित्री श्रीमती व्याख्या मिश्रा ने भाग लिया। सबसे पहले कार्यक्रम के मुख्य अतिथि एवं अध्यक्ष-सह-प्रबंध-निदेशक श्री ए पी चौधरी, निदेशक (प्रचालन) श्री उमेश चंद्र, निदेशक (कार्मिक) श्री वै आर रेड्डी ने ज्योति प्रज्वलित करके कार्यक्रम का शुभारंभ किया। तत्पश्चात मुख्य अतिथि महोदय श्री ए पी चौधरी ने विस्टील महिला समिति द्वारा प्रकाशित 'स्पार्क' पत्रिका का विमोचन किया। इस अवसर पर विस्टील महिला समिति की अध्यक्षा श्रीमती लता चौधरी ने समिति की गतिविधियों में सदस्यों की महत्वपूर्ण भूमिका एवं प्रयासों की सराहना की और 'स्पार्क' के संपादक मंडल के सदस्यों का अभिनंदन किया। तदुपरांत मुख्य अतिथि महोदय श्री ए पी चौधरी ने कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए संगठन में राजभाषा के प्रभावी कार्यान्वयन में हिंदी कक्ष के प्रयासों की सराहना की। डॉ कमलेश द्विवेदी के नेतृत्व में सभी कवियों ने अपनी कविताओं व चुटकुलों के माध्यम से दर्शकों का खूब मनोरंजन किया। इस अवसर पर श्री ए पी चौधरी ने सभी कवियों के सम्मान में उन्हें ज्ञापिकाएँ प्रदान कीं। कार्यक्रम की सभी ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की। कार्यक्रम का संचालन वरिष्ठ सहायक (अनुवाद) श्री गोपाल ने किया।

जरा गौर करें

बुलंद हौसलों के बादशाह

जीवन कितना भी कठिन क्यों न हो, जीने की चाह और उसमें बदलाव की आकांक्षा हो तो बदलाव जरूर आता है। मनुष्य को सिर्फ निष्ठा व आत्मविश्वास के साथ प्रयास करते रहना होता है। पुरानी दिल्ली की तंग गलियों वाले मुहल्ले के एक कमरे के मकान में एक बच्चा अपने सात भाई-बहनों, बीमार माँ एवं शिक्षा व मूलसुविधा तक जुटा पाने की क्षमताहीन असहाय पिता के साथ रहता था। वह हमेशा यही सोचता था कि जिंदगी की इस स्थिति से कैसे बाहर निकला जाए। बिजली व पानी जैसी जरूरी सुविधाओं से वंचित वह बच्चा रेलवे स्टेशन की बत्ती के नीचे बैठकर पढ़ाई करता था।

गुजरते समय के साथ उसने मिडिल स्कूल में अच्छे नंबर प्राप्त किए। इससे प्रभावित होकर उसके अध्यापक ने उसे हायर सेकेंड्री में दाखिला दिला दिया। हायर सेकेंड्री में भी बेहतर परिणाम आने के कारण उसे श्रीराम कॉलेज ऑफ कामर्स में प्रवेश मिल गया। बी.कॉम. करने के बाद उसकी मुलाकात जनार्दन ठाकुर नामक एक पत्रकार से हुई, जिसने उसे रिर्पोटर की नौकरी दिला दी। अब उस बच्चे को सिर्फ और सिर्फ आगे ही देखना था। वह 'ऑनलुकर' मैगजीन हेतु एक लेख लिखा, जिससे प्रभावित होकर मैगजीन के संपादक ने उसे साथ काम करने का एक मौका दिया। वहाँ काम करते-करते वह उस मैगजीन का संपादक बन गया। लगभग 10 वर्षों तक प्रिंट मीडिया के विभिन्न पत्रिकाओं का संपादन करते हुए एक दिन उसकी मुलाकात सुभाष चंद्रा से हुई।

सुभाष चंद्रा के साथ मिलकर उसने 'आपकी अदालत' नामक एक टी. वी. कार्यक्रम की परिकल्पना की। फिर क्या था, उसे दुनिया पहचानने लगी और अब वह देश का मशहूर पत्रकार एवं टी.वी. सूत्रधार बन गया था। आज उसके पास अपना टी.वी. चैनल है।

बड़े सम्मान के साथ बताना चाहते हैं कि वह बच्चा कोई और नहीं बल्कि इंडिया टी.वी. के अध्यक्ष व मुख्य संपादक श्री रजत शर्मा हैं। श्री रजत शर्मा ने लोकप्रिय शो 'आपकी अदालत' के माध्यम से अब तक लगभग 750 लोगों का इंटरव्यू ले चुके हैं। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में अपने शो के माध्यम से उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की है। उन्हें 'आपकी अदालत' शो के लिए कई बार 'सर्वश्रेष्ठ सूत्रधार' और 'इंडियन टेलीविजन अकादमी लाइफटाइम अचीवमेंट अवार्ड' भी प्राप्त हो चुके हैं। उन्होंने अपनी निष्ठा व परिश्रम के बल पर यह सावित करके दिखाया कि 'जिनके हौसले बुलंद होते हैं, उनके लिए कोई कार्य असंभव नहीं होता।'